ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 13 दिसम्बर 2015 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार 13 दिसम्बर 2015 से 19 दिसम्बर 2015

मा.शु. –02 ● वि० सं०–2072 ● वर्ष 58, अंक 50, प्रत्येक मगंलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 192 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,116 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

डी.ए.वी. मॉडल स्कूल दुर्गापुर नें मनाया 'ऋषि निर्वाण दिवस'

आर्य युवा समाज डी.ए.वी. दुर्गापुर के तत्वावधान में 'ऋषि निर्वाण' दिवस मनाया गया। ऋषि निर्वाण दिवस का शुभारंभ वृहद यज्ञ से किया गया जिसकी यज्ञमान स्वयं आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उपसभा की प्रधान एवं क्षेत्रीय निदेशिका पापिया मुखर्जी रहीं। प्रत्येक दिन की तरह इस दिन भी जिन छात्रों का जन्मदिन था उन सभी छात्रों ने विशेष यज्ञ में विशेष आहुतियां दीं। यज्ञ के अंत में संगीत शिक्षिका सुश्री श्रावणी मंडल ने अपने मधुर भजनों से उपस्थित बच्चों का मार्गदर्शन किया।

इसके पश्चात् प्रधान–महोदया ने छात्रों कोवेदों की महिमा बताते हुए वेदों के अनुसार दिनचर्या अपनाने के लिए कहा। उन्होंने कहा कि हम सबको ऋषि के उद्देश्यों को पूरा करते हुए पूरे समाज को वेदों के मार्ग पर प्रशस्त करना है। महोदया ने "आओ वेदों की ओर लौटें" का नारा देते हुए कहा कि आज हमारे समाज को वेद रुपी ज्ञान की अति आवश्यकता है। समाज में व्याप्त बुराइयों को वैदिक ज्ञान से ही समाप्त किया जा सकता है। यज्ञ के पश्चात् महोदया के दिशा–निर्देशन में महर्षि दयानंद और आर्य समाज पर आधारित वैदिक भजनों की इंटर हाउस प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। छात्रों ने अपने मधुर भजनों से सबको मंत्रमुग्ध कर दिया। कक्षा नौवीं और दसवीं के छात्रों के बीच वैदिक विचारधारा पर 'पावर प्वाइंट' प्रतियोगिता करवायी गई, जिसमें छात्रों का वैदिक सिद्धांतों के विषय में ज्ञानवर्धन हुआ।

प्रतियोगिता के पश्चात् आर्य युवा समाज डी.ए.वी. दुर्गापुर के मंत्री श्री राजेंद्र सिंह यादव ने छात्रों को **'असतो मा सद्गमय'** की शिक्षा दी। उन्होंने कहा कि व्यक्ति के जीवन में सत्य का आचरण होना अति आवश्यक है। सत्य से ही हम एक श्रेष्ठ समाज का निर्माण कर सकते हैं। अंत में दोनों प्रतियोगिताओं के प्रतिभागियों को पुरस्कृत किया गया। शांति पाठ के साथ 'ऋषि निर्वाण दिवस' का समापन हुआ।

वयोवृद्ध आर्य नेता श्री रामनाथ सहगल हुए सम्मानित

आर्य केन्द्रीय सभा, दिल्ली राज्य द्वारा 132वें महर्षि दयानंद निर्वाणोत्सव के मौके पर रामलीला मैदान में आयोजित एक भव्य समारोह में वयोवृद्ध आर्य नेता श्री रामनाथ सहगल को उनके द्वारा आर्य समान के प्रचार प्रसार मे की गई सेवाओं के लिए विशेष रूप से सम्मानित किया गया।

इस अवसर पर डॉ. सत्यपाल सिंह ने महर्षि दयानन्द को मानवता का पथप्रदर्शक बताते हुए कहा कि वर्तमान समाज में जातिवाद तृष्टिकरण जैसी विषमताओं से राष्ट्रवाद को गहरा खतरा उत्पन्न हो गया हे।

मुख्य वक्त डॉ. रमेश भारद्वाज ने का कि महर्षि दयानन्द सरस्वती ने सांस्कृतिक रक्षा करके स्वदेशी आन्दोलन को बढ़ावा दिया।

इस अवसर पर विश्व कल्याण यज्ञ का आयोजन किया गया और वैदिक धर्म प्रचार के लिए मोबाइल एप्लीकेशन की नयी योजनाओं का खुलासा किया गया।

डी.ए.वी ईस्ट आफ़ लोनी रोड दिल्ली में वैदिक चेतना शिविर सम्पन्न

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल ईस्ट आफ लोनी रोड़ दिल्ली में तीन दिवसीय वैदिक चेतना शिविर का आयोजन दिनांक 26नवम्बर से 27 नवम्बर तक किया गया। वैदिक चेतना शिविर में माध्यमिक कक्षाओं के छात्रों ने अत्यन्त हर्षोल्लास के साथ भाग लिया। शिविर का प्रारम्भ प्रातः कालीन देवयज्ञ के साथ किया गया। शिविर उद्घाटन अवसर पर विद्यालय की प्राचार्या श्रीमती समीक्षा शर्मा जी ने छात्रों को सम्बोधित करते हुए कहा कि "वैदिक चेतना शिविर सभी को वैदिक परम्पराओं से अवगत कराने का एक माध्यम है जिसके द्वारा हमें आर्य वैदिक विचारों का ज्ञान प्राप्त होता है। हम सभी का सौभाग्य है कि हम आर्य समाज एवं डी.ए.वी. जैसी संस्थाओं से जुडे हैं जहाँ चेतना शिविरों के द्वारा हमें जागरूक किया जाता है। मनुष्य वैचारिक रुप से जब तक समृद्ध नही होगा तब तक उसे अपने तथा दूसरों के प्रति कर्त्तव्यों का ज्ञान नहीं हो पायेगा। इसी वैचारिक समृद्धता को बढ़ाने का कार्य वैदिक चेतना शिविर करते हैं। यह शिविर हमें आर्य समाज एवं महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित वैदिक सिद्धान्तों का ज्ञान कराने तथा उनसे जुडने का अवसर प्रदान करते हैं।"

शिविर में छात्रों द्वारा अनेक गतिविधियों में भाग लिया गया जिसमें योगासन, भजन (ईश्वर भक्ति, देशभक्ति) प्रतियोगिता, श्लोकाच्चारण प्रतियोगिता, मन्त्रोच्चारण प्रतियोगिता, चित्रकला प्रतियोगिता तथा अग्निहोत्र विषय पर छात्रों को चलचित्र दिखाकर प्रश्नमंच का आयोजन भी किया गया। छात्रों ने सभी प्रतियोगिताओं में अत्यन्त उत्साह से भाग लिया एवं पुरस्कार प्राप्त किये। शिविर के समापन अवसर पर विद्यालय के आदरणीय प्रबन्धक महोदय श्रीमान नानक चन्द जी ने सभी छात्रों को आशीर्वाद देते हुए कहा कि "वैदिक चेतना शिविर हमें एक दूसरे से जुड़ने का एवं आपस में सहयोग की भावना को विकसित करने का अवसर प्रदान करते हैं, हमें इन शिविरों में पूर्ण मनोयोग से सहभागिता करनी चाहिए।" प्राचार्या श्रीमती समीक्षा शर्मा ने प्रबन्धक महोदय को धन्यवाद दिया तथा शान्तिपाठ के साथ ही शिविर का समापन हुआ।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. ९

संपादक – **पूनम सूरी**

आर्य जगत्

सप्ताह रविवार 13 दिसम्बर, 2015 से 19 दिसम्बर, 2015

निर्भय बनूँ

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

यदन्ति यच्च दूरके, भयं विन्दति मामिह ।
पवमान वि तज्जहि ।।

ऋग् ९.६४.२१

ऋषि: **मैत्रावरूणि: वसिष्ठ:।** देवता **पवमान: सोम:।** छन्द: **गायत्री।**

● **(यत्)** जो, **(अन्ति)** समीप, **(यत् च)** और जो, **(दूरके)** दूर, **(इह)** यहाँ, **(मां)** मुझे, **(भय)** भय, **(विन्दति)** प्राप्त करता है, **(पवमान)** हे सर्वत्र–संचारी, पवित्रकर्ता सोम प्रभु!, **(तत्)** उसे, **(वि जहि)** विनष्ट करो।

● मनुष्य प्राणियों में सबसे अधिक बुद्धिमान् होता हुआ भी सबसे अधिक भयशील है। अन्य सब पशु, पक्षी, सरीसृप, कीट, पतंग आदि जन्तु भयावह जंगलों में भी निर्भय विचरते हैं। पर मानव घर में भी भयभीत रहता है, दंश, मशक, वृश्चिक, सर्प, आधि, व्याधि, चोर, शत्रु, शासक आदि के भय से व्याकुल रहता है। ये भय आत्म–विश्वास और प्रभु–विश्वास की कमी के कारण होते हैं।

मैं भी समीप के और दूर के अनेक प्रकार के भयों से घिरा हुआ हूँ। समीप में मुझे अपने पड़ोसियों से, साथी–संगियों से, यहाँ तक कि घर के सदस्यों से भी भय लगा रहता है कि ये कहीं मेरा कुछ अनिष्ट न कर दें। अपने मन में सन्देह का बीज बोकर मैं सोचता हूँ कि कहीं ये मेरी हत्या न कर दें, मेरा धन न हड़प लें, मेरा रथ न हर लें। नींद में भी मुझे चोरों के सपने आते है। दूर जाता हूँ। दूर जाता हूँ तो वहाँ भी भय पीछा नहीं छोड़ता। सोचता हूँ कहीं रेलगाड़ी न टकरा जाए, कहीं मोटरकार आदि यान दुर्घटना–ग्रस्त न हो जाए, कहीं लुटेरे मुझे लूट न लें, कहीं मेरे दूर यात्रा पर आये होने के कारण मेरी अनुपम स्थिति में परिवार पर कोई संकट न आ जाए। ये सब तो ऐसे भय हैं, जो व्यर्थ ही मेरे शंकाशील मन को उद्विग्न किए रखते हैं; पर इनके अतिरिक्त कई भय सचमुच के भी होते हैं, जिनके भय का कारण वास्तव में उपस्थित होता है। उस समय भी मैं भय–कारणों का प्रतीकार करने के स्थान पर भयग्रस्त हुआ निष्कर्मा खड़ा रहता हूँ। मैं इतना भयशील हूँ कि मुझे सन्ध्या–वन्दन आदि सत्कर्म करते हुए भी भय व्यापे रहता है कि कहीं कोई मेरा उपहास न करे।

इन दूर के तथा समीप के सभी भयों को हे मेरे प्रभु! तुम्हीं दूर कर सकते हो। तुम्हारा सच्चा ध्यान मेरे अन्दर आत्म–संबल उत्पन्न कर सकता है। तुम 'पवमान' हो, सर्वत्र–संचारी, सर्वव्यापी और अन्तःकरण को पवित्र करनेवाले हो। तुम सर्वत्र मेरे चित्त की भय–दशा को जानकर और उससे मुझे मुक्त कर पवित्र करते रहो। हे पवित्रता के देव! तुम मेरे भयों को समूल विनष्ट कर दो, जिससे फिर कभी भय मेरे मानस को आक्रान्त न कर सके। समीप और दूर के सब स्थानों को, सब दिशाओं को, मेरे लिए निर्भय कर दो। ❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

भक्त और भगवान

● महात्मा आनन्द स्वामी

हृदय और मस्तिष्क को सी देने की बात चलाते हुए स्वामी जी ने कहा कि हृदय में श्रद्धा उत्पन्न कर, मस्तिष्क में ज्ञान उत्पन्न करके दोनों को सी दें। फिर जो आवाज सुनाई देगी, उसके अनुसार चलने से ईश्वर अवश्य मिलेगा।

अहंकार को समाप्त कर देने, अपने आपको प्रभु के अर्पण कर देने से प्रभु भी मिलते हैं। यह मरा हुआ अहंकार जन्म–मरण के बन्धन को खा जाता है। जो मनुष्य अपनी सब वस्तुएं परमेश्वर के अर्थ समर्पित कर देता है, उसके लिए परमात्मा सब प्रकार के सुख देता है। अपना सब कुछ उसी प्रभु के अर्पण कर दो।

अब आगे....

विश्व प्रेम की इस विशाल भावना को लेकर महर्षि ने आर्यसमाज की नींव रखी। हम यदि महर्षि के मुख्य उद्देश्य को भूलकर आर्य–समाज को छोटी–छोटी सीमाओं में सीमित कर दें तो यह महर्षि के साथ अन्याय है। आर्यसमाज के साथ भी अन्याय है। इसी बात को अधिक स्पष्ट करने के लिए महर्षि ने आगे चलकर इन्हीं नियमों में फिर कहा–

"प्रत्येक को (प्रत्येक आर्यसमाजी को) केवल अपनी उन्नति में ही सन्तुष्ट नहीं रहना चाहिए, अपितु दूसरों की उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।"

यह था महर्षि का विश्वप्रेम जो उन्होंने वेद भगवान् से प्राप्त किया। ऋग्वेद में मन्त्र आता है–

अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते सं भ्रातरो वावृधुः सौभगाय।
युवा पिता स्वया रुद्र एषां सुदुधा पृश्निः सुदिना मरुद्भ्यः।।

मन्त्र का अर्थ यह है कि "तुममें से कोई बड़ा नहीं, कोई छोटा नहीं, तुम सब भाई–भाई हो, मिलकर आगे बढ़ो, सौभाग्य के लिए, उन्नति के लिए, शान्ति के लिए। ईश्वर तुम्हारा पिता है, उत्तम दूध–अन्न देनेवाली धरती तुम्हारी माँ है। तुमसे कोई पराया नहीं, तुम सब भाई–भाई हो। इस प्रकार रहने वालों के लिए दिन बहुत अच्छे आते हैं।"

बोलो! बोलो! क्या इससे बड़ा समाजवाद भी कहीं मिलेगा? इससे बड़ा साम्यवाद भी कहीं विद्यमान है? यह है हमारा धर्म जिसकी नींव है विश्वप्रेम। यह विश्वप्रेम संघर्ष से नहीं आता, डिक्टेटरी से नहीं, कूरता से नहीं, अन्याय से नहीं, तलवार से नहीं। यह उत्पन्न होता है उस समय जब भक्त अपने भगवान् को विश्वरूप में देखता है। हर किसी में उसकी ज्योति देखकर प्रत्येक को अपना निःस्वार्थ प्यार देता है। प्रभु को प्रसन्न करने का सबसे सरल उपाय यह है। किसी माँ को प्रसन्न करना है तो सीधा उपाय यह है कि उसके बच्चे को प्यार कीजिए। प्रभु को प्रसन्न करना है तो विधि यह है कि उसके बनाए हुए प्राणियों से प्यार कीजिए–

खुदा के बन्दे तो हैं हजारों,
वनों में फिरते हैं मारे मारे।
मैं उसका बन्दा बनूँगा जिसको,
खुदा के बन्दों से प्यार होगा।।

यही बात श्री कृष्ण ने गीता में भी कही। उन्होंने कहा, ईश्वर को वह प्राप्त करता है जो दूसरों के हित में सदा तत्पर रहता है। और यह समझ में आनेवाली बात भी है। जो सच्चे ह्रदय से जनार्दन को प्यार करता है, वह उस जनता को प्यार क्यों न करे जो जनार्दन की कृति है? महर्षि दयानन्द के विश्वप्रेम का आधार यही विश्वरूप प्रेम था। फरुखाबाद में गंगा के किनारे महर्षि एक झोंपड़े में रहते थे। एक दिन उनके मित्र स्वामी कैलाशाश्रम वहाँ आ गये। स्वामी कैलाशाश्रम ने महर्षि के दरवाजे पर आकर कहा, "दयानन्द। मैं तुमसे एक बात कहने आया हूँ, अन्दर आ जाऊँ?" महर्षि हँसते हुए बोले, "अवश्य आओ महात्मा। इस छोटे–से झोंपड़े में यदि कैलाश पूरा आ सकता है तो आओ अवश्य।" कैलाश जी अन्दर आकर बोले, "दयानन्द। मैं तुमसे पूछने आया हूँ कि इतना तप करने के पश्चात्, इतना योग–साधन करने के बाद और मोक्ष का अधिकारी बनने के अनन्तर तुम यह किस धन्धे में फँस गए हो? क्यों सारे संसार की चिन्ता तुम्हें अशान्त किए देती है?" महर्षि ने इस बात को शान्ति से सुना, गम्भीर आवाज में बोले, "सुनो कैलाश। जो कुछ तुमने कहा उसे मैं समझता हूँ, परन्तु मैं केवल अपने लिए मोक्ष नहीं चाहता, मैं इस जलते हुए संसार के लिए शान्ति चाहता हूँ। इस संसार में जाकर देखो। यह आँसुओं के सागर में डूबा जाता है, सुलगता है, तड़पता है। मैं इसे छोड़कर जाऊँगा नहीं। मुक्त होऊँगा तो सबको साथ लेकर, नहीं तो यह मुक्ति मुझे चाहिए नहीं।"

यह बात आज से लगभग दो–ढाई हजार वर्ष पहले एक महापुरुष ने भी कही थी। श्री शंकर नम्बूदरीपाद उसका नाम था। केरल की धरती पर विशाल पेरियार नदी के किनारे कालड़ी नाम के ग्राम में उनका जन्म हुआ। पीछे चलकर संसार ने उन्हें जगद्गुरू कहा। उन्होंने भी संसार के कल्याण के लिए मोक्ष को लात मार दी।

मैंने जब से यह भगवा वेष पहना है

तब से बहुत स्थानों पर गया हूँ–गङ्गोत्तरी, जमुनोत्तरी, कैलास। गङ्गोत्तरी में कुछ ऐसे महात्मा रहते हैं जो बहुत उच्च–कोटि के हैं। कई–कई वर्ष हो गये हैं उन्हें वहाँ रहते हुए। एक महात्मा हैं जो तेरह वर्ष से मौन धारण करके बैठे हैं। मुझे उनका स्वरूप बहुत अच्छा लगा। मैं गङ्गोत्तरी गया तो प्रतिदिन उनके दर्शन के लिए जाता। एक गुफा में नंगधड़ंग वे बैठे रहते–साढ़े दस हजार फीट की उँचाई पर। बर्फ के ढेरों के मध्य में रहते हुए भी वे कोई वस्त्र नहीं पहनते। सात मास वहाँ बर्फ जमी रहती है। इन दिनों में कोई कपड़ा उनके पास नहीं होता। मैं प्रतिदिन उनकी गुफा के पास जाता, उनके पास पहुँचकर उन्हें देश और विदेश का हाल सुनाता, बताता कि "देश स्वतन्त्र हो गया है, अंग्रेज चला गया है, परन्तु भ्रष्टाचार बहुत बढ़ गया है, लोग बहुत दुःखी हैं।" बताया कि "संसार में अमेरिका और रूस एक–दूसरे के भय में व्याकुल हुए जाते हैं। ऐटम बम, हाईड्रोजन बम बन रहे हैं। संसार विनाश की ओर बढ़ा जाता है।" प्रतिदिन इसी प्रकार की कितनी ही बातें सुनाता। प्रतिदिन वे सुनते, मौन रहते। ऐसा प्रतीत होता जैसे मैं कथा कह रहा हूँ और वह अकेले श्रोता चुपचाप सुने जाते हैं। एक दिन मैं उनके पास गया तो हाथ जोड़कर कहा, "आज एक कड़वी बात कहना चाहता हूँ, आप बुरा तो नहीं मानेंगे?" उन्होंने मुस्कराते हुए संकेत किया, "नहीं।" मैंने तनिक उग्रता से कहा, "इतने दिनों से मैं आपको संसार की अवस्था सुना रहा हूँ आपसे प्रार्थना कर रहा हूँ कि इस संसार के इस दुःख की चिकित्सा कीजिए और आप हैं कि सब–कुछ सुनकर भी एक पत्थर की भाँति मौन बैठे रहते हैं। आपमें और इस पत्थर में क्या अन्तर है?" वे फिर मुस्कराए; संकेत से उन्होंने पूछा, "तू क्या चाहता है?" मैंने कहा, "केवल यह चाहता हूँ कि अपने इस मौन को तोड़िये, मेरे लिए बोलिए, देश के लिए बोलिए, संसार के कल्याण के लिए बोलिए।" उन्होंने आँखे मूँद ली; थोड़ी देर तक मूँदे रखीं, तब मुस्कराती आँखों से मेरी ओर देखते हुए बोले, "आनन्द स्वामी!" मैंने आश्चर्य से कहा, "आप मेरा नाम कैसे जानते हैं? मैंने तो अपना नाम आपको बताया नहीं।" वे बोले, "मैं यहाँ वर्षों से बैठा हूँ तो क्या व्यर्थ ही? सब–कुछ मुझे ज्ञात है। मुझे पता है कि तुम्हारा पहले नाम खुशहालचन्द था, तुम्हारे पिता का नाम श्री गणेश दास था, तुम्हारा जन्म पंजाब के एक गाँव जलालपुर जट्टाँ में हुआ।" उस समय मैंने समझा कि वे महात्मा कितने बड़े योगी हैं। उस समय मुझे महर्षि दयानन्द का वह वचन याद आया, जो उन्होंने 'यजुर्वेद–भाष्य' में **"येनेदं भूतं"** के भावार्थ में लिखा है कि "जिस योगी ने साधनों और उपसाधनों द्वारा अपने चित्र को सिद्ध कर लिया है, वह तीनों कालों–भूत, भविष्यत् और वर्तमान को जानने वाला हो जाता है।" अब भी ये पूज्य महात्मा गङ्गोत्तरी में रहते हैं। मैं जाता हूँ तो कई बातें पूछते हैं। पिछली बार गया तो बोले, "आनन्द स्वामी। संसार के झंझट छोड़, यहाँ गङ्गोत्तरी में रह। तू चला जाता है तो गङ्गोत्तरी सूनी–सी हो जाती है।" मैंने उन्हें कहा, "आप मुझे यहाँ रहने के लिए कहते हैं, मैं आपसे कहता हूँ कि नीचे चलिए। संसार बहुत बिगड़ गया, उसे बचाने का प्रयत्न कीजिए।" उन्होंने कहा, "नहीं आनन्द स्वामी। अभी नीचे चलने का समय नहीं आया। अभी यह संसार मेरी बात सुनेगा नहीं। तेरी बात भी नहीं सुनेगा। अभी इसे और बिगड़ना है। काफी विनाश होगा तब इसे होश आएगा। और जो तू नीचे चलने की बात कहता है तो स्वामी दयानन्द भी एक बार इस गङ्गोत्तरी से नीचे गए थे। तुम्हारे संसार ने उनके साथ क्या व्यवहार किया? पत्थर फैंके उनपर, ईंटें फैंकीं, गालियाँ दीं उन्हें और अन्त में विष दे दिया। और फिर स्वामी दयानन्द के साथ ही क्यों? इस संसार ने किस–किसके साथ अत्याचार नहीं किया? गांधी जी के साथ, श्रद्धानन्द के साथ, लेखराम के साथ क्या बर्ताव किया इसने? इस संसार को अपनी मौज मनाने दो, मुझे उसके पास जाना नहीं।"

मैंने प्यार के साथ उन्हें कहा, "महाराज। आप तो साधु हैं, सन्त हैं, और महात्मा हैं, आप ही यदि संसार पर कृपा न करेंगे तो फिर कौन करेगा? आप तो जानते हैं–

तरवर फले न आपको, नदी न पीवे नीर।
परमारथ के कारने, सन्तन धरा शरीर।।

अनेक प्रकार से उन्हें निवेदन किया परन्तु वे माने नहीं। कई दूसरे महात्माओं से भी मैंने कहा। वे नही माने। वे नहीं माने। जीवन–मुक्ति का सुख साधारण सुख नहीं। ऐसा सुख है वह जिसे कोई व्यक्त नहीं कर सकता–

कोई उसको समझ भी ले तो फिर समझा नहीं सकता।
जो इस हद पर पहुँच जाए तो वो खामोश ही रहता।।

ऐसा है यह आनन्द। इसे छोड़कर आना सरल नहीं। इसे लात मारी तो जगद्गुरू दयानन्द ने, जगद्गुरू शंकराचार्य ने।

महर्षि के जीवन की एक घटना है– कठिन तप के पश्चात् घोर अभ्यास के अनन्तर जब उनके लिए मुक्ति का द्वार खुल गया तो उन्होंने सोचा कि अब इस शरीर को जीवित रखने का कोई लाभ नहीं। गङ्गोत्तरी के निकट एक चोटी पर वे पहुँचे इस इच्छा के साथ कि चोटी से कूदकर शरीर को छोड़ देंगे, परन्तु तभी भीतर से आवाज आई, "दयानन्द, यह क्या कर रहे हो? अपने लिए मोक्ष का द्वार खुल गया, इससे तुम्हें शान्ति मिल गई? नीचे इस जलते हुए संसार को देखो। ये अग्नि की लपटें, ज्वालाओं के समुद्र, क्या इन करोड़ों लोगों पर तुम्हें दया नहीं आती? क्या उनके सम्बन्ध में तुम्हारा कोई कर्त्तव्य नहीं? आगे बढ़। इस अग्नि को शान्त करने का प्रयत्न कर।" तभी एक दूसरी आवाज ने कहा, "मैं एक छोटी–सी बूँद इस विशाल ज्वाला को कैसे बुझा पाऊँगा?" और पहली आवाज ने अधिकार के साथ कहा, "यह अग्नि बुझे या न बुझे तुम्हारा कर्त्तव्य यह है कि इसे बुझाने का यत्न करो। भले ही ऐसा करते हुए राख हो जाओ, परन्तु कर्त्तव्य यह है।"

सचमुच कर्त्तव्य यह है। परन्तु यह भावना उस समय जागती है जब विश्वरूप का प्रेम विश्वप्रेम में बदल जाता है। विश्वप्रेम की भावना जाग उठे तो विश्वरूप का प्रेम स्वयं उसमें आ जाता है, परन्तु एक शर्त है कि यह विश्वप्रेम दिखावे के लिए न हो, वास्तविक हो। संसार का दुःख तुम्हारा दुःख बन जाए। संसार के आँसू तुम्हारी आँखों से बहें। जब ऐसा हो तो प्रभु दर्शन देते हैं जरूर, क्योंकि वे कहीं दूर तो हैं नहीं। जो सबसे अधिक निकट हैं, उनसे भी अधिक निकट है वह। हर ओर है, हर समय है, प्रत्येक स्थान पर है।

प्यार की इस भावना को जगाकर ओम् का जाप करो, लगातार करते जाओ। ओम् के अक्षर को अपनी भृकुटि में देखने का प्रयत्न करो। धीरे–धीरे वहाँ प्रकाश जागेगा। वह प्रकाश ही निरन्तर अभ्यास से उस परमानन्द को प्रकट करेगा जिसका आज तक कोई वर्णन नहीं कर सका। प्रभु–दर्शन की विधि यह है। परन्तु–

एक दिन एक सज्जन मेरे पास आए; बोले, "आपके पास बैठ जाऊँ?" मैंने कहा, "आइए, पधारिए। मेरे पास बैठने के लिए परमिट तो लेना नहीं पड़ता।" वे बैठ गए तो मैंने कहा, "बताइए, आपकी क्या सेवा करूँ?" वे बोले, "मुझे ईश्वर का दर्शन करा दो।" मैंने आश्चर्य से कहा, "अभी?" वे बोले, अभी करा दो तो अच्छी बात है, फिर मुझे काम पर जाना है, देर हुई जाती है।" मैंने पूछा,"क्या काम करते हैं आप?" वे बोले, "ठेकेदारी करता हूँ।" मैंने पूछा, "ठेकेदारी में तो कुछ लोग उल्टी –सीधी बातें करते हैं, क्या आप ऐसा भी करते हैं?" वे बोले, "यह तो व्यापार है, व्यापार में सब–कुछ करना पड़ता है।" मैंने हँसते हुए कहा, "तो जाइये अपना व्यापार कीजिए। ईश्वर–दर्शन के झगड़े में आप क्यों पड़ते हैं? व्यापार कीजिए, खूब धन कमाइए और दान भी देते रहिए।" दूसरों का अधिकार छीनने, अपने लिए ही जीने और अपने ही सुख की सामग्री एकत्रित करने वाले से प्रभु–दर्शन के मार्ग पर चलना कठिन है। प्रभु–दर्शन का मार्ग उसके लिए बड़ी कठिनता से खुलता है। हाँ, खुलता तो है परन्तु पहले काफी प्रायश्चित्त करना पड़ता है। चान्द्रायण व्रत–जैसे व्रत रखने पड़ते हैं। प्रभु दर्शन करना हो तो अपने हृदय में दूसरों का उपकार करने की इच्छा उत्पन्न करो। उसी प्रकार दूसरों से प्यार करो जिस प्रकार अपने–आप से करते हो। सारे संसार को अपना समझो प्रत्येक देश को को अपना देश, प्रत्येक जाति को अपनी जाति, प्रत्येक पराये का अपना सगा–सम्बन्धी; ऐसा करने से ही सच्चा प्रेम उत्पन्न होता है। ऐसा करने से ही मनमोहन प्रीतम दिखाई देने लगता है।

विश्वप्रेम की भावना के जागते ही कोई पराया नहीं रहता। तब प्रत्येक रूप में वह दिखाई देता है। प्रत्येक आवाज उसकी आवाज, प्रत्येक रूप में उसकी झलक दिखाई देती है। तब सबको प्यार करता भक्त, सबके लिए अपने–आप को न्यौछावर करता हुआ केवल उसको पुकारता है। आँख भिखारी बनकर केवल उसको खोज़ती है–

पलक पसारे हैं खड़े, बैरागी दो नैन।
माँगे दास मधूकरी, खुली रहें दिन रैन।।

परन्तु यह प्यार मेरे भाई, सबके भाग्य में नही आता। बहुत अच्छे कर्म किए हों तब यह विश्वरूप का प्रेम जागता है–

मुहब्बत के लिए कुछ खास दिल मखसूस होते हैं,
ये वो नगमा है जो हर साज पर गाया नहीं जाता।

ईश्वर के लिए प्यार भी ईश्वर की कृपा से पैदा होता है। किस प्रकार प्रकट होता है, इसे समझना सरल नहीं–

मुहब्बत मानी औ अलफाज में लाई नहीं जाती।
ये वो नाजुक हकीकत है जो समझाई नहीं जाती।।

अद्भुत टीस है इसके भीतर, एक विचित्र दर्द और एक अनोखा आनन्द है दर्द में–
इश्क से तबीयत ने जीस्त का मजा पाया।
दर्द की दवा पाई, दर्द ला–दवा पाया।।

और जब यह प्रेम जाग उठता है तब कितने ही प्रकार के रूप धारण करता है, कितने ही विभिन्न आधार बना लेता है। सूरदास ने गोपियों को आधार बनाकर अपने प्यार की कहानी सुनाई। भवभूति ने सीता के होठों से अपने राम को प्यार के गीत सुनाए। कालिदास ने शकुन्तला का सहारा ले लिया, मीरा के हाथ गिरधर गोपाल आ गए, मूलशंकर के हृदय में देखने की लगन जाग उठी, परन्तु सबमें भावना एक है–आत्मसमर्पण की भावना। इस भावना से प्रभु का दर्शन होता है अवश्य, इसके बिना कभी होता नहीं।

परन्तु प्रेम की यह बात कभी समाप्त न होगी। न हो, तभी अच्छा है। मैं उस प्यार की आग को जलाए देता हूँ आपके हृदय में, बुझाने वाला कोई और आएगा। परन्तु कल्याण इसमें है कि इसे जलने दीजिये, बुझाइए नहीं। इस अग्नि के प्रकाश में प्रभु मिलेंगे और जब वे मिल जायें तब ऋग्वेद 7.96.9 के अन्तिम मन्त्र के शब्दों में भक्त कहता है–

अयं सु तुभ्यं वरुण स्वधावो हृदि स्तोम उपश्रितश्चिदस्तु।
शं नः क्षेमे शमु योगे नो अस्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः।।

हे वरुणदेव। मेरे गीत केवल तेरे लिए हैं। मेरे हृदय में बैठी हुई पूजा केवल तेरे लिए है, मेरे प्यार का केन्द्र तू है, मेरा धन तू है, शान्ति तू है। हर ओर से मिले हुए विद्वानों के आशीर्वाद मेरी रक्षा करते हैं, तेरी कृपा को मैंने पा लिया है।

और अब.....अब समय तो पूरा हो गया। शेष बात कल सही।

शेष अगले अंक में....

गृह्यसूत्रों की उपादेयता?

● उदयन आर्य

वेदों की पठन–पाठन परम्परा का निर्वहन करने के लिए गृह्यसूत्रों की महत्वपूर्ण आवश्यकता है। गृह्य का अर्थ गृहस्थ से सम्बन्धित है अर्थात गृहस्थ में क्या कर्म करणीय है? क्या अकरणीय हैं? इन सबका विशेष रुप से दिग्दर्शन किया गया है। परन्तु हमें इन्हीं गृह्यसूत्रों का विशेष अध्ययन करने पर कभी–कभी वेद विरुद्ध बातें भी देखने को मिलती हैं। इसके समाधान में शोधार्थी यही करना चाहेगा कि गृह्यसूत्र में हर बात को प्रमाण रुप में स्वीकार नहीं करना चाहिए। मेरे द्वारा अध्ययन किये जाने पर ऋग्वेदीय गृहासूत्रों में कहीं–कहीं पर गृह्यसूत्रकार तत्कालीन परम्परा का केवल मात्र वर्णन करते हैं तथा कहीं–कहीं अन्य आचार्यों के मतो का भी वर्णन करते हैं। जैसे:ऋग्वेदीय गृह्यसूत्र में वपा शब्द का प्रयोग मिलता है। व्याख्याकारों ने यहाँ वपा शब्द का अर्थ पशु की चर्बी किया है। पशु की चर्बी को अग्नि में आहुति करने से वायु, जल और वातावरण में जो प्रदूषण होगा वह यज्ञीय नहीं हो सकता। परन्तु 'वाहवपाम् जातवेदा' इस मन्त्र को समझना जरुरी है। बिना देवता के मन्त्र का अर्थ तर्कसंगत नहीं हो सकता। क्योंकि देवता वर्ण्यविषय होता है। इस मन्त्र का देवता 'जातवेद' है। इसका अर्थ हुआ जातातित यो वेद अथवा 'जातानि व एनं विदु:'। निरुक्तकार की इस व्याख्या के अनुसार ज्ञानी व्यक्ति जातवेदा है। उसके लिए वपा के वहन का निवेदन वेद मन्त्र में किया गया है।

वैदिक पद यौगिक होते हैं। वपा शब्द पाणिनि व्याकरण के अनुसार 'डुवप् बीज सन्तानें' धातु से बनता है तो उप्यते या यया यस्यां वा सा वपा इस दृष्टि कोण से अन्न अथवा खेत का नाम वपा है। अतः इस मन्त्र में वपा शब्द से अन्न का ही ग्रहण करना उचित है। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने इस मन्त्र में वपा का अर्थ भूमि किया है। जो कि व्याकरण और निरुक्त वेदांगों के अनुकूल है। यज्ञीय पवित्र कर्मकाण्ड के भी अनुकूल है। अतः यहाँ वपा शब्द का अर्थ चर्बी करना कथमपि उचित नहीं हो सकता। आर्च गृह्यसूत्रों में अश्वलायन, सांख्यायन, कौषितकी आते हैं। ध्यातव्य है कि तत्कालीन परम्परा में वपा शब्द का अर्थ चर्बी किया गया है और बहुधा गृह्यसूत्रकार चर्बी अर्थ ही स्वीकार करते हैं। मेरा मानना है कि सूत्रकार केवल मात्र तत्कालीन परम्परा का निर्देशन करते हैं न कि प्रमाणित। जैसे:–अन्य उदाहरण गृह्यसूत्रों में वर्णित है।

जो श्राद्ध की पद्धति है उस पद्धति में कौन–सी पद्धति क्यों की जा रही है। जैसे:– जल पात्र में तिल डालकर ब्राह्मणों के हाथ में देना। उस जल को ब्राह्मण क्या करेंगे? ऐसा कुछ भी उल्लेख नहीं है। गृह्यसूत्रों में कहा गया है कि ब्राह्मणों के कर लेने पर पिण्ड दान करें। प्रश्न है कि पिण्ड क्या है? किस चीज से निर्मित है? पिण्ड का उद्देश्य क्या है? शास्त्रीय परम्परा में पिण्ड शरीर का नाम है। 'यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे' अपने पितरों की आज्ञा में अपने पिण्डों को मनसा, वाचा, कर्मणा, समर्पित कर देना ही वस्तुतः पिण्ड दान है परन्तु यहाँ इस प्रकार का कोई स्पष्टीकरण नहीं किया गया है। इसी प्रसंग में आगे लिखते हैं कि पिण्ड से अवशिष्ट अन्न को ब्राह्मणों को ही दे देना चाहिए। इस वर्णन से सिद्ध होता है कि सूत्रकार पिण्ड का मतलब अन्न से बना हुआ पिण्ड ऐड ऐसा करते हैं।

अब पुनःप्रश्न होता है कि जब पूर्ण भोजन हो चुका हो तब उन पिण्डों को ब्राह्मण कैसे खायेंगें? पिण्ड भी 3,5,या 7 है तो भोजन से तृप्त ब्राह्मण इन पिण्डों को किस उदर में सेवन करेंगे? इत्यादि उदाहरणों से प्रतीत होता है कि गृह्यसूत्रकार न तो अपने मन्तव्य का वर्णन कर रहे हैं' अपितु तत्कालीन समाज की परम्पराओं का केवल मात्र वर्णन कर रहे हैं। इसी कारण से बहुत सारी अन्ध परम्पराओं का वर्तमान में भी प्रचलन हैं और यह सब कहीं न कहीं गृह्यसूत्रों का परिणाम है। अतः गृह्यसूत्रों के अध्ययन करते समय विशेष अध्यान देना चाहिए तथा हर बात वेदानुकूल ही होनी चाहिए। क्योंकि वेद स्वतः प्रमाण है तथा अन्य ग्रंथों को वेद के प्रमाण की आवश्यकता पडती है।

यदि कोई ग्रंथ वेदानुकूल है तो स्वीकरणीय है अन्यथा स्वीकरणीय नहीं है। जिन महानुभावों को इस प्रकार के लेखों पर आपत्ति होती है उन्हें एक बार अवश्य ही गृह्यसूत्रों को पढ़ लेना चाहिए और अध्ययन करते समय पूर्वाग्रह से ग्रसित नहीं होना चाहिए। मेरा तात्पर्य यह नहीं है कि गृह्यसूत्रों उपयोगी नहीं है परन्तु इनमें अच्छे प्रसंगो का भी वर्णन मिलता है। जैसे:–यज्ञकर्म के समापन पर ब्राह्मणों को भोजन भी अवश्य कराना चाहिए। इस प्रसंग में लिखते हैं कि ब्राह्मण वाणी रुप वय श्रुत, शील और चरित्र इन गुणों से युक्त होना चाहिए। शाङ्खायन कहते हैं कि इन सब गुणों में भी श्रुत गुण सर्वातिशायी है। इस गुण का अतिक्रमण नहीं करना चाहिए। यहाँ अत्यन्त स्पष्ट है कि वेद विद्या विद् चरित्र से अतिनिर्मल सुन्दर शीलवान् ब्राह्मण पद वाच्य है ब्राह्मणत्व में जन्म कारण नहीं है। वर्तमानकाल में जाति व्यवस्था के अन्तर्गत ब्राह्मण कुल में उत्पन्न अनधीत व्यक्ति भी जिस तरह से ब्राह्मण पद वाच्य है।

यह शाङ्खायन को स्वीकार नहीं है। जाति व्यवस्था के कारण ब्राह्मणत्व प्राप्त व्यक्ति सामाजिक सौजन्य के कारण नहीं बन सकते। अतः वेद विद् ब्राह्मण ही भोज्य सत्कारी है। इस प्रकार से अन्य उदाहरणों का दिग्दर्शन गृह सूत्र कार वेद विद् को ही ब्राह्मण संज्ञा देते हैं। परन्तु वर्तमान में जिस तरह से जाति व्यवस्था का स्वरुप दिखाई देते है। वह कहाँ तक उचित है? ऋग्वेदीय गृह सूत्रों में विभिन्न प्रकार के करणीय और अकरणीय कर्मों का निदर्शन मिलता है।

पादटिप्पणी

1. वाहवपाम् इति मन्त्रे पशुरेव दृश्यते तस्मात् इह दर्शनात्, गोपशु अजो वा पशु स्यात् कौषीतकि गृह्यसूत्र 03/15/04
2. द्रष्टव्य यजुर्वेद भाष्य महर्षि दयानन्द अध्याय 35/20
3. वाग्रुपवय: श्रुतशील वृत्तानि गुणा: शाङ्खायनगृह्यसूत्र 1/2/2
4. श्रुतं सर्वानत्येति शाङ्खायनगृह्यसूत्र 1/2/3
5. न श्रुतमतीयात् शाङ्खायनगृहसूत्र 1/2/4

प्राचार्य
गुरु विरजानन्द संस्कृत महाविद्यालय
गुरुकुल, करतापुर, जालन्धर, 144801
(पंजाब)

शिवगंज गुरुकुल की ब्रह्मचारिणियाँ पुरस्कृत

हरियाणा संस्कृत अकादमी एवं गुरुकुल रेवली के संयुक्त तत्त्वावधान में आयोजित अखिल भारतीय शास्त्रीय स्पर्धा का आयोजन हुआ। इस अवसर पर विभिन्न प्रतियोगिताएँ आयोजित की गई। प्रतियोगिताओं में आर्य कन्या गुरुकुल शिवगञ्ज की छः बालिकाओं ने भाग लिया। व्याकरण अष्टाध्यायी भाष्य प्रथमावृति 1–4 अध्याय शलाका में ब्र. प्रज्ञा ने प्रथम स्थान प्राप्त किया, प्रथमावृति 5–8 अध्याय शलाका में ब्र. कृष्णा ने प्रथम व ब्र. मनीषा ने तृतीय स्थान प्राप्त किया। संयुक्त श्लोक गायन प्रतियोगिता में ब्र. कृष्णा व ब्र. प्रज्ञा ने प्रथम स्थान प्राप्त किया। धातुपाठ कण्ठस्थीकरण प्रतियोगिता में ब्र. सुनीति ने प्रथम स्थान प्राप्त किया। इन बालिकाओं के गुरुकुल पधारने पर आचार्य सूर्या देवी, आचार्या धारणा याज्ञिकी और श्रीमती अरुणा नागर सहित समस्त प्रबन्ध समिति ने राजस्थान व गुरुकुल का गौरव बढ़ाने पर स्वागत सत्कार के साथ शुभाशीष प्रदान की।

गो रक्षा बलिदान दिवस पर शाहदरा में हुआ यज्ञ संपन्न

1966ई. के हजारों गौरक्षा बलिदानियों की याद में हिन्दू महासभा तथा सावरकर टाइम्स के द्वारा शिवालय मंदिर के सामने अनाज मण्डी, शाहदरा दिल्ली–110032 पर पं. विकास आर्य द्वारा विधि विधान पूर्वक हवन यज्ञ का समारोह हुआ। जिसमें अनेक संत महात्माओं शृद्धा सुमन अर्पण किये।

इस अवसर बोलते हुए क्षत्रिय जी ने कहा कि देश में कैमिकल युक्त दूध बिक रहा है जिससे लाखों आदमी बीमार हैं और अस्पतालों में भर्ती है।गाये और भैंसो का दूध नई पीढ़ी को प्राप्त हो इस विषय पर गंभीरता से विचार किया गया।

प्रस्ताव पादित किया गया कि देश में विदेशी पेट्रोल और डीजल के विकल्प के रूप में गायों और भैंसों के गोबर से देश भर में गैस का निर्माण कर एक उद्योग के रूप में लगाया जाए जिससे लाखों लोगों को रोजगार भी प्राप्त होगा। देश में गऊशालाएं और भैसों की डेरियों का निर्माण किया जाए। इससे देश की मानव जाति को ताजा दूध, घी मक्खन, पनीर व अन्य मिठाईयां भी बिना मिलावट की प्राप्त हो सकेंगीं।

उत्कृष्ट शंका समाधान

● स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक

शं शंका–भारत में महिला और पुरुष दोनों को समान दर्जा प्राप्त है। लेकिन विवाह के बाद महिलाओं के पास मंगलसूत्र और सिंदूर रहता है। वो उनकी विवाहित होने की पहचान है। लेकिन विवाहित पुरुषों की क्या पहचान है?

समाधान–देखिये पुरुषों के पास भी पहचान है। पर आजकल लोगों ने उनकी पहचान बिगाड़ दी है। हमारे वैदिक शास्त्रों के अनुसार विवाह से पूर्व श्रृंगार करने का अधिकार न पुरूष को है और न स्त्री को। जब श्रृगार कर लेती है, बिंदी लगा लेती हैं, सिंदूर लगा लेती हैं और आभूषण आदि पहन लेती है। विवाहित पुरुषों को भी अधिकार मिलता है, कि हाथ में अंगूठी पहनो, गले में चेन पहनो । ये शृंगार के साधन हैं। इससे पता लगता है कि यह विवाहित पुरूष है। जिसके हाथ में अंगूठी नहीं है, गले में चेन नहीं है, इसका मतलब है कि वो व्यक्ति अविवाहित है। लोगों ने पहचान में बिगाड़ कर दिया। यह लोगों का दोष है। लोगों को पहचान में बिगाड़ नहीं करना चाहिए। जब शृंगार का अधिकार मिले, तभी करना चाहिए, उससे पहले नहीं।

शंका–आपने कहा, ईश्वर निराकार है। परछाई (प्रतिबिंब) का आकार दिखता तो है, लेकिन परछाई, (प्रतिबिंब) पकड़ नहीं सकते? फिर हम निराकार ईश्वर को कैसे पकड़ेंगे?

समाधान–ईश्वर के प्रतिबिंब को पकड़ नहीं सकते। यह तो अलग बात है। परछाई को पकड़ने की बात तो बाद में। पहले बने तो परछाई। परछाई बनती है साकार वस्तु की। ईश्वर है ही निराकार, तो परछाई बनेगी ही नहीं। अगर परछाई बनेगी ही नहीं, तो उसका प्रतिबिंब सिद्ध ही नहीं होता, तो उसे पकड़ने का प्रश्न ही नहीं है। इसलिए न तो ईश्वर की परछाई है, न ही उसकी परछाई पकड़नी है। निराकार–(साक्षात्कार करना) है। और वह होगा, अष्टांग योग से। उसे करें। ईश्वर को पकड़ना। जीव अलग है, ईश्वर अलग है। ईश्वर निराकार है और जीव भी निराकार है।

शंका–ईश्वर को पाने के लिए क्या यह आवश्यक है कि संध्या, उपासना आदि संस्कृत में बोलकर की जाये। अब अगर वेद हिन्दी में लिखे गये हैं, तो मंत्र भी हिन्दी में होंगे। इसलिए संध्या उपासना भी क्या हिन्दी में की जा सकती है?

समाधान–आदि सृष्टि में ईश्वर ने संस्कृत भाषा में वेदों का ज्ञान दिया। वेद संस्कृत में थे। तब एक ही भाषा थी, दूसरी कोई भाषा नहीं थी। संस्कृत में ही वेद मंत्रों के आधार पर ईश्वर की उपासना चलती थी। अब भले ही उसके हिन्दी भाष्य बन गये हैं। परन्तु मूल, मूल ही होता है और भाष्य, भाष्य ही होता है। ईश्वर उपासना मूल मंत्रों से संस्कृत में ही की जानी चाहिए। बाद में आप हिन्दी अनुवाद भले ही कर लें। अगर मूल संस्कृत छूट गई, तो मूल मंत्र छूट जायेगा। और यदि मंत्र छूट गया, तो किसी भी उपासना करने वाले को उपासना करनी ही नहीं आयेगी, वो भटक जायेगा। पंडित गंगाप्रसाद उपाध्याय जी ने अपनी एक पुस्तक में विदेश की घटना लिखी है। विदेश में एक गड़रिया भेड़ बकरी चराने वाला था। और वो बड़ा ईश्वर भक्त था। वहां ठंड बहुत होती थी। वह ओवरकोट पहनकर के भेड़ चराने बाहर जाता था। एक दिन वह पहाड़ पर जाकर के भगवान से प्रार्थना कर रहा था–"ऐ भगवान। मेरी बहुत इच्छा है, कि मैं तुम्हारी बहुत सेवा करूँ। भगवान् तुम मुझे कभी मिल जाओ तो तुम्हारी बहुत सेवा करूँगा। जैसे मैं इन भेड–बकरियों को चराता हूँ,और इन भेड़–बकरियों में कीड़े भी होते हैं, और वो कीड़े मेरे कोट में चिपक जाते हैं। मैं उन्हें साफ करता रहता हूँ। तुम भी भेड़–बकरी चराते होगे, तुम्हारे भी कोट में कीड़े चिपक जाते होंगे। तुम मुझे कभी मिल जाओ, तो ऐसी सेवा करूँ, कि एकदम बढ़िया पूरा कोट साफ कर दूँ।" अब बताइये, संस्कृत वेद मंत्र छोड़ दिया, तो परिणाम क्या निकला। लोग क्या समझेंगे, कि भगवान भी हमारी तरह ही भेड़–बकरी चरा रहा है। इस तरह भगवान का ही स्वरूप समझ में नहीं आएगा, और लोग भटक जायँगे। इसलिए वेद मंत्रों से उपसना करनी चाहिए, ताकि पता चले, भगवान कोई भेड़–बकरी चराने वाला गड़रिया नहीं है। भगवान सर्वव्यापक है, सर्वशक्तिमान है, कभी शरीर धारण नहीं करता। तो ईश्वर का स्वरुप ठीक बचा रहेगा और उसकी उपासना ठीक हो सकेगी। इसलिए वेद मंत्रों से उपासना करनी चाहिए। आज जो लोग मूर्तियों की पूजा कब्रों की पूजा, कर रहे हैं। यह वेद मन्त्रों से ईश्वर उपासना छोड़ देने का ही परिणाम है। देख लीजिये, संसार ईश्वर के सही मार्ग से भटक गया या नहीं।

दर्शन योग महाविद्यालय
रोजड़ (गुजरात)

चरित्र निर्माण हेतु ईश्वर स्तुतिप्रार्थनोपासना मंत्रों पर विचार

● सरोज आर्या वर्मा

धर्म का सीधा सम्बन्ध ईश्वर की सत्ता और उसके आदेशों से है और उसके आदेश वेदमंत्रों में ओतप्रोत हैं, ये बड़े उपयोगी एवं शिक्षाप्रद हैं। इनमें मानव जीवन को क्रियात्मकरूप से चरित्रवान् बनाने के लिए बड़ी उत्तम शिक्षाएँ निहित हैं। चारों वेदों के 20379 मंत्रों में महर्षि दयानन्द ने अपनी आर्ष–बुद्धि द्वारा ईश्वर स्तुति–प्रार्थना–उपासना के लिए आठ मंत्रों का निर्धारण किया है। ये आठों मंत्र प्रत्येकपर्व, शुभ कर्म के आरम्भ में उच्चारण किये जाने की प्रथा है। इन मंत्रों में जीवन को क्रियात्मकरूप से नैतिक बनाने के लिए उत्तम उपदेश है। इनका अर्थसहित चिंतन–मनन कर लेने से उपासना का मुख्य उद्देश्य उपासक के सम्मुख आ जाता है। ईश्वर उपासना से चरित्र का सीधा सम्बन्ध भी प्रकट हो जाता है। इन मंत्रों के अर्थों पर चिन्तन–मनन करने से आचार बनता है और व्यवहार मर्यादित होता है। इनके अनुसार कार्य किया जायेगा तो व्यक्ति के नैतिक उत्थान की भावना चरितार्थ होगी और जीवन में पवित्रता आयेगी। वह अधिकारों के साथ साथ कर्त्तव्यों पर भी ध्यान देगा। महर्षि दयानन्द संस्कारविधि के सामान्य प्रकरण के प्रारम्भ में लिखते हैं– **'सब संस्कारों के आदि में निम्नलिखित मंत्रों का पाठ और अर्थ द्वारा एक विद्वान् वा बुद्धिमान पुरुष ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना स्थिर–चित्त होकर परमात्मा में ध्यान लगा के करे और सब लोग उसमें ध्यान लगाकर सुनें और विचारें।'** उन्होंने 'संस्कारविधि' में स्वयं इन मंत्रों के अर्थ लिखे हैं, उन अर्थों में जो महत्त्व निहित है, उनका वर्णन इस प्रकार है। ईश्वर स्तुति प्रार्थना उपासना का प्रथम मंत्र–

ओउम् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव यद् भद्रं तन्न आसुव।। (यजु. 30/3)

अर्थ– **सवितः**= हे सकल जगत् के उत्पत्तिकर्त्ता, समग्र ऐश्वर्ययुक्त, **देव**= शुद्ध स्वरूप, सब सुखों के दाता परमेश्वर! आप कृपा करके, **नः**= हमारे, **विश्वानि**= सम्पूर्ण, **दुरितानि**= दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुःखों को, **परा सुव**= दूर कर दीजिए, **यत्**= जो, **भद्रम्**=कल्याण कारक गुण, कर्म, स्वभाव और पदार्थ है, **तत्**= वह सब, **नः**= हम को, **आ सुव**= प्राप्त कीजिए।।

उपासक के मन में परमेश्वर के प्रति दृढ़ श्रद्धा का भाव उत्पन्न हो इसलिए पूर्ण भक्ति भाव व तन्मयता के साथ, अर्थसहित मंत्रों का पाठ करना चाहिए। उपासना के मध्य मंत्र के प्रत्येक शब्द के अर्थ युक्त चिंतन मनन से चित्त की वृत्तियाँ स्थूल शरीर में व्यापक आत्मा तथा परमात्मा की ओर एकाग्र होती हैं। अर्थज्ञान होने से उपासक आनन्द में लीन रहता है। मंत्रों की भावना के हृदयंगम होने से प्राप्त अन्तःकरण की शुद्धता तथा पवित्रता के वशीभूत हो, शुद्ध और पवित्र आचरण तथा शुभकर्मों के अनुष्ठान से उसमें मानवीय भावना आती है, चरित्र का निर्माण होता है। उपासना के द्वारा उपासक परमात्मा के गुणों को धारण करता है, वे गुण उसे मर्यादा से बाहर नहीं जाने देते। इस प्रकार मर्यादित जीवन जीने वाला उपासक सांसारिक कार्यों को करता हुआ भी आत्मा और परमात्मा को न भूलकर शुभकर्मो को करता हुआ सुख और आनन्द को भोगता है।

वेदों का महत्त्व उसे स्मरण करने तथा यथावत् रूप में सुरक्षित रखने तक ही सीमित नहीं है, उसका वास्तविक महत्त्व उनके अर्थ को अधिगम करने में है। अतः वेदार्थ की प्रशंसा सभी वैदिक विद्वानों ने की है। निरुक्तकार लिखते हैं–

'जिस प्रकार लौकिक वृत्तियों में विद्या के कारण पुरुष विशिष्ट स्थान पाता है, इसी प्रकार वेदार्थ को जानने वालों में तो बहुश्रुत विद्वान् ही प्रशस्त माना जाता है।' (निरुक्त 1/16)

शब्द का प्रयोजन किसी अर्थ का बोध कराना होता है। जिस शब्द से किसी अर्थ का बोध न हो वह निरर्थक अथवा व्यर्थ कहलाता है। आचार शास्त्र मे व्यर्थ शब्दों को बोलने का निषेध है। इसीलिए जो व्यक्ति मंत्रों के अर्थ को जाने बिना तोते के समान केवल रट लेता है, उसे कोई विशेष लाभ नहीं होता। ऐसे व्यक्ति के लिए महर्षि दयानन्द लिखते हैं–

"जो वेद को स्वर और पाठमात्र को पढ़ के अर्थ नहीं जानता, वह जैसा वृक्ष डाली, पत्ते, फल, फूल और अन्य पशु धान्य आदि का भार उठाता है, वैसे भारवाह अर्थात् भार का उठाने वाला है और जो वेद पढ़ता और उनका यथावत् अर्थ जानता है, वही सम्पूर्ण आनन्द को प्राप्त हो के देहान्त के पश्चात् ज्ञान से पापों को छोड़, पवित्र धर्माचरण के प्रताप से संपूर्ण सर्वानन्द (मोक्ष) को प्राप्त होता है।"

शेष पृष्ठ 06 पर

☞ पृष्ठ 05 का शेष

चरित्र निर्माण हेतु ईश्वर...

(मानक संस्करण, उदयपुर, सत्यार्थ प्रकाश, तृतीय–समु. पृष्ठ 69)

प्रश्न उठता है कि क्या अर्थज्ञान के बिना मन्त्रों का पाठ करना ही नहीं चाहिए? जो मनुष्य वेद मन्त्रों के अर्थ को नहीं जानता, किन्तु मन्त्रपाठ करता है, वह उसकी अपेक्षा अच्छा है, जो पाठमात्र भी नहीं करता। केवल मन्त्र स्मरण कर लेने मात्र से भी मनुष्य को कुछ–न–कुछ लाभ अवश्य होता है। क्योंकि

जिनकी स्मृति में कल्याणी वेदवाणी के शब्द रहते हैं, कालान्तर में वह कभी अर्थज्ञान में प्रवृत्त भी हो सकता है।

इस प्रार्थना मंत्र द्वारा साधक/भक्त परमेश्वर से सब प्रकार के **'दुरितों'** को दूर कर **'भद्र'** की प्राप्ति की प्रार्थना कर रहा है। यहाँ परमेश्वर को **'देव सविता'** कहकर पुकारा गया है जो सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण शब्द हैं। सर्वप्रथम इन दोनों शब्दों पर ही विचार करते हैं।

सविता शब्द का महत्त्व

'सविता' का सम्बन्ध रचना से है। महर्षि लिखते हैं–

'जो सब जगत् की उत्पत्ति करता है, इसलिये परमेश्वर का नाम 'सविता' है।' (मानक संस्करण, उदयपुर, सत्यार्थ प्रकाश, प्रथम–समु. पृष्ठ 17)

ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में 'सविता' शब्द का अर्थ करते हुए महर्षि लिखते हैं–

'सर्वजगदुत्पादक, सर्वशक्तिमान्! आप सब जगत् को उत्पन्न करने वाले हैं।' महर्षि ने अपने ग्रंथों में सविता शब्द से प्रायः उत्पादक तथा प्रेरक अर्थों का ग्रहण किया है।

निरुक्तकार लिखते हैं– **'सविता सर्वस्य प्रसविता' (निरुक्त 10/31)**

अर्थात्– परमेश्वर जगत् को उत्पन्न करके उसके प्रत्येक घटक को अपने अपने कार्य में प्रवृत्त करता तथा मनुष्यमात्र को शुभ कर्मों में प्रेरित करता है।

ऋग्वेद के पांचवें मण्डल के 82वें सूक्त के सभी नौ मंत्रों का देवता 'सविता' है।

'सखाय आ निषीदत सविता स्तोम्यो नु नः। दाता राधांसि शुम्भति' (ऋ.1/22/8)

इस मंत्र में परमेश्वर का उत्पादक, स्तोतव्य (स्तुति करने योग्य) तथा दाता के रूप में सविता नाम से स्मरण किया है।

महर्षि लिखते हैं– 'सामर्थ्यवाले का नाम ईश्वर है। **'य ईश्वरेषु समर्थेषु परमः श्रेष्ठः स परमेश्वरः'** जो ईश्वरों का ईश्वर अर्थात् समर्थों में समर्थ जिसके तुल्य कोई भी न हो, उसका नाम 'परमेश्वर' है (मानक संस्करण, उदयपुर, सत्यार्थ प्रकाश, प्रथम–समु. पृष्ठ 17)

परमेश्वर दुरितों को दूर करने और भद्र की प्राप्ति के लिये प्रेरणा कर शक्ति प्रदान करता है। ईश्वर के प्रेरकत्व पर विश्वास करके उपासक/भक्त उससे शक्ति की प्रार्थना करता है। **देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मणे।।** (यजु. 1/1) इत्यादि श्रुतिवचन साधक को शुभकर्म करने के लिए प्रेरित करते हैं। उपासक को दुर्गुण, दुर्व्यसन और दुःखों को दूर करने के लिये संघर्ष अर्थात् पुरुषार्थ तो स्वयं ही करना होगा। किन्तु यह विश्वास कि वह अकेला नहीं है, उसके सिर पर ईश्वर का हाथ है, वह उसे लड़खड़ाता देख आगे बढ़कर उसे थाम लेगा– यह भावना ही उसकी शक्ति को कई गुना बढ़ा देगी। ऐसी स्थिति में अपने कार्य में आ रही बाधाओं को पार करता हुआ वह अपने लक्ष्य तक पहुँचने में सफल होगा।

देव शब्द का महत्त्व

देव का सम्बन्ध व्यापकता से और न्याय व्यवस्था से है। निष्काम भाव से परोपकार करने वाले 'देव' हैं। **'प्रजापतिस्चतुर्विशः'** (शत. 12/6/1/37) प्रजापति परमात्मा को देव कहते हैं। निरुक्तकार लिखते हैं– **'यही परमात्मा देव सर्वाधिक महाभाग्यशाली एवं केवल उपास्य है।'** (नि. 7/15)

सृष्टि रचयिता परमेश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, न्यायकारी, दयालु, सर्वाधार आदि अनन्त गुणों से युक्त हो, निष्काम भाव से जीवों को अनादि जीवन उपयोगी असंख्य पदार्थों तथा कर्मानुसार कर्मफल भोग प्रदान कर जीवों का यथायोग्य पालन पोषण कर रहा है। उसका यह उपकार पक्षपात रहित सभी जीवों को यथावत् प्राप्त हो रहा है। अतः परमात्मा प्रथम कोटि का 'देव' है।

महर्षि ने इस मंत्र में 'देव' शब्द का अर्थ **'शुद्ध स्वरूप, सब सुखों का दाता परमेश्वर'** किया है। परमेश्वर शुद्धस्वरूप है, क्योंकि उसके समस्त कार्य लोककल्याण के लिये हैं। परमेश्वर बिना किसी भेदभाव के सब पदार्थ सबको प्रदान करता है। वेद में कहा है– **'याथातथ्यतोऽर्थान् व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः'** (यजु. 40/8) अर्थात् नित्य प्रजाओं के लिए ठीक–ठीक कर्तव्यों पदार्थों का विधान करता है। इसी अर्थ में तो वह परमेश्वर बिना किसी पक्षपात के सबको शुद्धस्वरूपता के साथ सुविधायें प्रदान करता है। इसी मंत्र में आगे कहा है– **'शुद्धम् अपापविद्धम्'** अर्थात् परमेश्वर शुद्ध और पाप से रहित है।

परमेश्वर शुद्धस्वरूप है

परमेश्वर सारी अपवित्रता से पूर्णरूप से रहित है, उसमें कोई न्यूनता नहीं है, वह पूर्णरूप से निष्कलंक है, उसमें कोई दोष या अवगुण नहीं है. वह सदा, सर्वथा पवित्र है। वह स्वयं तो पवित्र है ही, दूसरों को भी पवित्र करने वाला है। मानवमात्र को वह दोषों, दुर्गुणों और पापों से बचने के लिये संकेत करता है। जब कोई व्यक्ति चोरी, दुराचार या अन्य पापकर्म में प्रवृत्त होता है तो उसकी आत्मा में ग्लानि, भय, संकोच एवं पापकर्म में प्रवृत्त न होने की प्रेरणा होती है। यह उसी परमेश्वर की ओर से पवित्र करने वाला संकेत है। महर्षि लिखते हैं–

'और जब आत्मा, मन इन्द्रियों को किसी विषय में लगाता, वा चोरी आदि बुरी वा परोपकार आदि अच्छी बात के करने का जिस क्षण में आरम्भ करता है, उस समय जीव की इच्छा, ज्ञानादि उसी इच्छित विषय पर झुक जाते हैं। उसी क्षण में आत्मा के भीतर से बुरे काम करने में भय, शंका और लज्जा, तथा अच्छे कामों के करने में अभय, निःशंकता और आनन्दोत्साह उठता है। वह जीवात्मा की ओर से नहीं, किन्तु परमात्मा की ओर से है।' (मानक संस्करण, उदयपुर, सत्यार्थ प्रकाश, सप्तम–समु. पृष्ठ 180)

ईश्वर की ओर से प्रदत्त यह प्रेरणा 'आत्म ज्योति' है। उपनिषद् में कहा है **'तच्छुभ्रं ज्योतिषां ज्योतिः।'** (मु. 2/2/9) – वह शुभ्र ज्योतियों का ज्योति है। इस ज्योति को सतत् देदीप्यमान और जलाये रखने के लिये आत्मा को प्रति क्षण प्रभु की ओर समर्पित रखना चाहिए। आत्मा में अजस्र उत्तम और उन्नति प्रेरक विचारों को प्रवाहित करते रहना चाहिए। इसके लिये स्वाध्याय, सत्संग और ईश्वर स्तुति प्रार्थना उत्तम साधन हैं।

जो परमेश्वर के इस संकेत को समझकर इसे मान लेता है, वह पापकर्म करने से बच जाता है। लेकिन जो व्यक्ति स्वार्थ व अज्ञान के वशीभूत होकर संकेत को अनसुना कर देता है, वह पापकर्म में प्रवृत्त हो जाता है। जो परमेश्वर के संकेत की अवहेलना करता है। धीरे धीरे उसकी आत्मा निर्बल होती जाती है। तब पापकर्म में प्रवृत्त होते समय उसे परमेश्वर की प्रेरणा सुनाई नहीं देती है, यह इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है।

त्वं हि विश्वतोमुख विश्वतः परिभूरसि। अप नः शोशुचदघम्।। (ऋ. 1/97/6)

मनुष्यों के द्वारा सच्चे प्रेमभाव से प्रार्थना किया हुआ अन्तर्यामी ईश्वर आत्मा में सत्य के उपदेश के द्वारा उनको पाप से पृथक् करके शुभ गुण–कर्म–स्वभावों में प्रवृत्त करता है, इसलिये वह नित्य उपासना करने योग्य है।

ईश्वर ने यह सृष्टि जीवात्मा को उत्तम कर्म करने और तदनुसार फल भोगने के लिये रची है। जीव शुभ और अशुभ दोनों प्रकार के कर्म करने में स्वतंत्र है। परिणामस्वरूप जब जीवात्मा मन के आधीन और मन इन्द्रियों के पीछे और इन्द्रियाँ संसार के विषयों में लिप्त हो जाती है, तब जीवात्मा पाप मार्ग पर चलने लगता है। इसके विपरीत जब इन्द्रियाँ मन के आधीन, मन आत्मा के आधीन और आत्मा परमात्मा को समर्पित होता है तब वह पुण्य मार्ग का पथिक बन जाता है।

मानव पवित्र गुण से युक्त हो उसके लिये आवश्यक है कि वह मन, वचन और कर्म से शुद्ध पवित्र हो। अर्थात् मन में कोई अपवित्र विचार न आने दे, न वाणी से कोई अपवित्र वचन बोले और न कोई अपवित्र कर्म करे। यही नहीं पवित्रता के लिए यह भी आवश्यक है कि उसका जीवन अवगुणों, दोषों और विकारों से रहित हो।

परमेश्वर सुखों का दाता है

परमपिता परमेश्वर ने कृपापूर्वक जीवों के प्रादुर्भाव से पूर्व भोग्य सामग्री तथा अन्न–जल, वृक्ष–वनस्पतियाँ, फलफूल, ओषधियाँ, सूर्य, चन्द्र, अग्नि, जल, वायु, पृथ्वी, आकाश आदि का निर्माण कर बिना किसी भेदभाव के, बिना किसी शुल्क के सबको प्रदान किया है। जीवों के भोग–अपवर्ग के लिये अनुकूल शरीर प्रदान करता है। मानवजीवन के अन्तिम लक्ष्य की प्राप्ति के लिये परमेश्वर ने वेदज्ञान प्रदान किया है। परमेश्वर ने नाना प्रकार के ऐश्वर्य उत्पन्न किये हैं। वे मनुष्यों को अपने–अपने कर्म के अनुसार प्राप्त होते रहते हैं।

अहं भुवं वसुनः पूर्व्यस्पतिरहं धनानि संजयामि शश्वतः।
मां हवन्ते पितरं न जन्तवोऽहं दाशुषे विभजामि भोजनम्।। (ऋ.10/48/1)

हे मनुष्यो! मैं सनातन परमेश्वर सम्पूर्ण जगत् का स्वामी हूँ। मैं अन्य सनातन जीवात्माओं और प्रकृति का तथा सब धर्मों का अर्थात् कार्यजगत् का विजय करता हूँ। सब जीव मुझे पिता की तरह पुकारते हैं। मैं सबको सुख पहुँचाने वाले मनुष्य को उत्तमोत्तम भोग्यसामग्री प्रदान करता हूँ। **अब विचारना चाहिए कि प्रार्थना किससे की जाती है?**

मांगा उससे ही जाता है जिसके पास कोई (वह) वस्तु होती है और माँगता वह है जिसके पास उसका अभाव होता है। लोकव्यवहार में भी हम देखते हैं कि प्रार्थना सदैव सामर्थ्यवान् से ही की जाती है, सामर्थ्यहीन से कोई प्रार्थना नहीं करता। किसी को धन की अभिलाषा हो तो वह धन के लिये प्रार्थना किसी धनिक से ही करेगा, किसी निर्धन से नहीं। इसी प्रकार सुखप्राप्ति के लिये प्रार्थना सुखी व्यक्ति से ही की जाती है, किसी दुःखी से नहीं।

इस प्रार्थना मंत्र में उपासक **'दुरित'** को दूर करने की प्रार्थना **'सविता'** अर्थात् सकल जगत् के उत्पत्तिकर्त्ता परमेश्वर से कर रहा है। सकल जगत् का उत्पत्तिकर्त्ता होने से वह हमारा पिता है, पालक है। वह हमारा पिता ऐश्वर्ययुक्त है, सामर्थ्यवान् है, ऐसा सामर्थ्यवान् पिता उपासक की प्रार्थना पूर्ण करने में पूर्णरूप से सक्षम है। इस मंत्र में **'भद्र'** प्राप्ति की याचना **'देव'** अर्थात् शुद्धस्वरूप और सुखों के दाता परमेश्वर से की जा रही है। इस रूप में भी सुखदाता परमेश्वर उपासक की प्रार्थना पूर्ण करने में समर्थ है।

इन्द्रो दिव इन्द्र ईशे पृथिव्या इन्द्रो अपामिन्द्र इत्पर्वतानाम्।
इन्द्रो वृधामिन्द्र इन्मेधिराणामिन्द्रः क्षेमे योगे हव्य इन्द्रः।। (ऋ. 10/89/10)

परमेश्वर द्युलोक का स्वामी है, परमेश्वर पृथिवीलोक का स्वामी है, परमेश्वर जल का स्वामी है, परमेश्वर पर्वतों का अधिपति है, परमेश्वर महान् से महान् आत्माओं का राजा है और परमेश्वर ही मेधावी मनुष्यों का शासक है। वह परमेश्वर प्राप्त वस्तु के संरक्षण के लिए प्रार्थनीय है और वही परमेश्वर अप्राप्त वस्तु की प्राप्ति के लिये आह्वान किये जाने के योग्य है।

शेष अगले अंक में....

भगवद्गीता का वास्तविक स्वरूप

● डॉ. रघुवीर वेदालंकार

आर्यजगत् के सितम्बर के किसी अंक में श्री अश्विनी कुमार पाठक के विचार गीता के सम्बन्ध में पढ़ने को मिले कि क्या वर्तमान काल में उपलब्ध गीता वही वास्तविक गीता है जिसका उपदेश युद्धकाल में भगवान् कृष्ण ने अर्जुन को दिया था? निश्चित रूप में कहा जा सकता है कि वर्तमान गीता के सभी 700 श्लोकों का उपदेश युद्धकाल में नहीं दिया गया था। प्रमाणों के आधार पर विदित होता है कि वास्तविक प्राचीन गीता 70 या 72 श्लोक वाली ही थी। यह बात निर्विवाद है कि महाभारत नामक ग्रन्थ में निरंतर वृद्धि होती रहती है। स्वामी दयानन्द ने भी महाराज भोज को प्रमाण देकर ऐसा लिखा है। गीता भी महाभारत का अंग है। अतः इसकी श्लोक वृद्धि से इन्कार नहीं किया जा सकता।

इस विषय में अन्य हेतु इस प्रकार हैं– (1) डॉ. लोकेश जी के पिता डॉ. रघुवीर जी, जो उच्चकोटि के विद्वान् थे तथा जनसंघ के अध्यक्ष भी रहे थे, वे प्राचीन ग्रंथों की खोज में इधर–उधर जाते रहते थे। उन्हें तिब्बत में घोड़े चराने वालों अष्टाध्यायी मिली थी तथा कहीं से 72 श्लोकी गीता भी मिली थी, ऐसा हमने डॉ. रघुवीर जी के समय अपनी छात्रावस्था में सुना था।

(2) एक 70 श्लोकी गीता मेरे पास इस समय भी है जिसका पुनर्मुद्रण आर्यसमाज रामपुरा कोटा (राज.) ने किया है। इसकी कहानी यह है– सन् 1914 के जुलाई मास के कलकत्ता से प्रकाशित होने वाले 'मार्डन रिव्यू' नामक पत्र में डॉ. नरहर गोपाल सर देसाई का एक लेख 'the Bhagwat Gita from the Island of Bali' छपा था। लेख का सार यह है कि जावा द्वीप के पास बाली नामक द्वीप है। जावा में हिन्दू बसते थे, राज्य भी हिन्दुओं का था। वाल्मीकि रामायण किष्किन्धाकाण्ड 40/30 श्लोक में यवद्वीप के रूप में इसका उल्लेख है। जावाद्वीप समूह सभ्यता का केन्द्र था। भारत से ब्राह्मण भी संस्कृत पुस्तकें लेकर वहाँ पहुँचे थे। डॉ. देसाई येनाग देश में नौकरी पर थे। वहाँ एक पुस्तक पढ़ते समय इनकी दृष्टि 'बालीद्वीप में हिन्दू रामायण तथा हिन्दुओं के चार वर्ण' नामक शीर्षक पर पड़ी। उत्कण्ठा वश डॉ. देसाई ने सन् 1912 में बाली के लिए प्रस्थान किया तथा बाली के निकटवर्ती टापू जावा के 'सुवर्जा नामक बन्दरगाह पर उतरे क्योंकि वहीं से बाली के लिए जहाज जाते थे। सुवर्जा में डॉ. देसाइ को हिन्दुओं का कोई अता–पता न चल सका। एक दिन एक भारतीय मुसलमान बाली द्वीप की राजधानी 'बुलेलांग' से वहाँ माल खरीदने आया था। उसने डॉ. देसाई को बतलाया कि बाली द्वीप में पढ़े–लिखे ब्राह्मण रहते हैं जिन्हें पण्डा कहते हैं तथा बाली द्वीप के 'आसेम' नामक बन्दरगाह में एक हिन्दू राजा भी रहता है। डॉ. देसाई दो दिन की समुद्री यात्रा करके आसेम पहुँच गए। वहाँ पर पण्डा लोगों के पास संस्कृत की पुस्तकें देवनागरी लिपि में न होकर कवि भाषा में थी। निराश होकर डॉ. देसाई वहां के राजा के पास गए। राजा इन्हें देखकर आश्चर्य चकित हुआ। डॉ. देसाई वहाँ तीन दिन ठहरे। उन्हें पता चला कि इस समय वहाँ संस्कृत ग्रन्थ नहीं हैं। तभी राजा के पुत्र ने अपने पुस्तकालय से महाभारत का 'भीष्म पर्व' मँगवाया। 14×2½ इंच लम्बे–चौड़े ताडपत्रों पर भीष्म पर्व लिखा हुआ था, जिसे लकड़ी के सन्दूकों में सुरक्षित रखा गया था। उसी भीष्म पर्व में भगवद्गीता केवल एक ही अध्याय की थी, अठारह अध्यायों की नहीं। उस द्वीप के सबसे बड़े विद्वान् पण्डा बयान् पिडाड से पढ़वाकर उन गीता के श्लोकों की नकल डॉ. देसाई से करली। उसके बाद अपना लेख लिखा था जिसमें उन्होंने बतलाया था कि उस बाली द्वीप वाली गीता की निम्न विशेषताएँ हैं। (1) यह गीता 'इष्टदेव स्वजन से प्रारम्भ होती है। (2) सभी श्लोक एक ही अध्याय में हैं। श्लोक 700 नहीं, अपितु कुल 70 हैं। (3) 18 अध्यायों वाली गीता के सभी श्लोक इसमें नहीं हैं।

बाली द्वीप के हिन्दू कहते हैं कि 1438 ई. में जब जावाद्वीप पर मुसलमानी राज्य स्थापित हुआ तो तब जावा का एक ब्राह्मण 'बाहु राहु' अपने धर्म की रक्षा के लिए कुछ संस्कृत पुस्तकें लेकर बाली द्वीप भाग आया था। इस संग्रह में महाभारत के आदि, विराट्, भीम, मूसल, अस्थानिक, स्वर्गारोहण, उद्योग तथा आश्रमवासी ये 8 पर्व हैं, शेष जावाद्वीप में हैं।

लोकमान्य तिलक ने 'गीता रहस्य' नामक अपने ग्रन्थ में लिखा है कि यह गीता बाली और जावा द्वीपों में सवंत् 535 में विद्यमान थी। गीता रहस्य परिशिष्ट में तिलक जी लिखते हैं "तथापि हम यह नहीं कह सकते कि जब मूल भारत का महाभारत बनाया होगा, तब गीता में कुछ भी परिवर्तन नहीं हुआ होगा। गीता और महाभारत वही ग्रंथ हैं जिनके मूल स्वरूप में कालान्तर में परिवर्तन होता रहा और जो इस समय गीता तथा महाभारत के रूप में उपलब्ध हैं, वे उस समय के मूल ग्रन्थ नहीं हैं।"

पाटलिपुत्र समाचार के सम्पादक प्रसिद्ध इतिहासवेता काशीप्रसाद जायसवाल ने इस 70 श्लोकी गीता को प्रकाशित करके लिखा था "इस पुरानी प्रति के सभी श्लोक एक साथ पढ़ने से कुछ भी विषयभंग मालूम नहीं होता। गीता के सभी मूल सिद्धान्त इन 70 श्लोकों में आ गए हैं। 70 श्लोकी गीता का विषय विभाग इस प्रकार है– प्रथम दो श्लोकों में प्रथम अध्याय के 47 श्लोकों का तात्पर्य है। 3–4 श्लोकों में अर्जुन को युद्ध के विपरीत दैन्यभाव से रोकते हैं। 4–8 श्लोकों में जीवात्मा के अजर–अमर होने का ज्ञान है। 9–10 में युद्ध के लिए प्रेरणा है। श्लोक 11 में निष्काम कर्म, 12–16 में योग का उपदेश तथा 17–19 में कर्मकाण्ड का उपदेश है। 20–22 पुनर्जन्म, 23–26 में ज्ञान काण्ड, 27 में कर्मकाण्ड की महिमा वर्णित है। 28–33 तक योग तथा उसका फल, 34–38 में परमात्मा की सर्वव्यापकता, 39–42 में भक्तों के कर्तव्य, 43 भक्ति का स्वरूप, 44–45 में भगवद्दर्शन, 46 में भगवद्दर्शन का उपाय, 47–54 में परमात्मा की विभूतियों का वर्णन, 55–57 में परमात्मा के विश्वरूप का दर्शन, 58–60 अर्जुन द्वारा स्तुति तथा विश्वरूप को प्रणाम 61–62 में परमात्मा के दर्शन की योग्यता, 63–64 में परमेश्वर की सर्वव्यापकता, 65–66 में सत्व, रज, तथा तम का वर्णन, 67–69 में त्रिगुणातीत बनने का उपाय तथा फल, 70 में त्रिगुणातीत व्यक्ति का कर्तव्य। इस प्रकार इन 70 श्लोकों में गीता के सभी सिद्धान्त आ गए। यह 70 श्लोकी गीता मेरे पास है। अतः यह निश्चित है कि वर्तमान गीता में पर्याप्त प्रक्षेप किए गए हैं।

बी. 266 सरस्वती विहार
दूरभाष मो. 9868144317

शहीद स्मृति चेतना समिति ने शहीद करतार सिंह सराबा को दी श्रद्धाञ्जलि

आजादी की लड़ाई में गदर के शहीदों का अमूल्य योगदान रहा है। विदेशी शक्तियां पुनः भारतीय युवाओं को पथभ्रष्ट करने के लिए नशा व पाश्चात्य संस्कृति के मायाजाल में फंसाना चाहती हैं। देश की रक्षा तभी होगी, जब हम उन्हें अपनी संस्कृति तथा देशभक्तों के पावन चरित्र से शिक्षित करेंगे''–ये सद्‌विचार दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के महामंत्री विनय आर्य ने शहीद स्मृती चेतना समिति आर्यसमाज सरस्वती विहार, दिल्ली में आयोजित अमर शहीद करतार सिंह सराबा की बलिदान शताब्दी पर कहें।

साहित्यकार रविचन्द्र गुप्ता, पूर्व डी.सी.पी. चौ. चन्द्रभान, समाजसेवी के.के. अग्रवाल, दक्षिण दिल्ली शिक्षा समिति चेयरमैन यशपाल आर्य, प्रधान राम निवास गुप्ता ने "शहादत का मोल" कलैण्डर 2016 का भी लोकार्पण किया।

श्री प्रदीप सेतिया ने कहा– 16 जनवरी 1914 को "गदर अखबार" के माध्यम से अमेरिका व अन्य देशों के 8000 से अधिक भारतीयों के सशस्त्र क्रान्ति की प्रेरणा दी गई थी जिसके लिए करतार सिंह सराबा ने 16 नबम्बर तथा विष्णु गणेश पिंगले ने 17 नवम्बर को हंसते–हंसते फांसी का फंदा चूमा व देशवासियों को जागरूक किया।

वरिष्ठ पत्रकार जय सिंह कटारिया ने कहा कि देश के सर्वागीर्ण विकास हेतु भारतीय नागरिकों को भी एकजुट होकर विश्व में फैले आंतकवाद

से निपटने के लिए सरकार से आग्रह करना होगा।

इस अवसर पर देवीदत्त सजल, प्रेम कुमार शुक्ल भी उपस्थित थे।

विदेशी मत में गये 253 ईसाइयों ने वैदिक धर्म ग्रहण किया

ओडिशा एवं झारखण्ड के सीमावर्ती आदिवासी बहुल सुन्दरगढ़ जिले के इन्दरपुर गांव में 253 ईसाई स्त्री पुरुषों ने यज्ञ में आहुति देकर विधिपूर्वक वैदिक धर्म को ग्रहण किया यह कार्यक्रम उत्कल आर्य सभा के प्रधान श्री स्वामी धर्मानन्द जी सरस्वती के निर्देशन एवं मार्गदर्शन में श्री स्वामी व्रतानन्द जी सरस्वती एवं प. विसिकेशन जी शास्त्री ने संपन्न कराया। इस अवसर पर आसपास के हजारों श्रद्धालु जन इन्हें आशीर्वाद देने पधारे थे।

उदात्त जीवन का आधार : संस्कार

● डॉ. धर्मवीर सेठी

संस्कृतः देवभाषा; संस्कारः देवभाषा ज्ञान का प्रतिफल; संस्कृतिः संस्कार का व्यावहारिक पक्ष और सांस्कृतिक पक्ष और सांस्कृतिकः उस संस्कृति का मंचन। वस्तुतः ये सभी शब्द और भाव परस्पर अन्योऽन्याश्रित हैं। यह वाक्य प्रायः सुनने को मिलता है कि 'अमुक बालक के व्यवहार को देख कर पता चलता है कि उसके माता–पिता ने उसे कितने अच्छे संस्कार दिये हैं'। बात सही है क्योंकि ' माता निर्माता भवति' – माँ ही तो श्रेष्ठ बालक का निर्माण करने वाली होती है। शिवाजी का प्रसंग आए तो जीजाबाई को अवश्य याद किया जाएगा। अभिमन्यु की घटना के साथ उसकी माँ सुभद्रा का स्मरण अनायास हो आएगा। राष्ट्रीय अस्मिता को बचाने के लिए न्योछावर होने वाले वीर, धार्मिक क्षेत्र के धर्मगुरु, समाज कल्याण के लिए अग्रणी एवं अन्य युग–पुरुष जो भी रहे हों, उनके पीछे किसी न किसी रूप में मातृ–शक्ति की प्रेरणा रही है। शायद इसलिए वेदोक्त सोलह संस्कारों में प्रथम तीन संस्कार तो माँ की कोख से ही सम्बन्धित हैं; वहीं से उदात्त स्वभाव वाली सन्तान का निर्माण आरम्भ होता है।

यही आचरण की, संस्कार की पक्की नींव है। भवन (मानव देह) अपने आप आलीशान बनेगा और उसे 'सुसंस्कृत' की संज्ञा से अलंकृत भी किया जाएगा। महाभारत में मानव जन्म के महत्त्व को इन शब्दों में आँका गया है–

न मानुषात् श्रेष्ठतरं हि किंचित्

अर्थात् मनुष्य से बढ़कर और कोई श्रेष्ठ है ही नहीं। महाकवि तुलसीदास ने तो यहाँ तक कह दिया–

बड़े भाग मानुष तन पावा।
सुरदुर्लभ सद् ग्रन्थहिं गावा।।

मनुष्य जन्म अनेक पुण्यों का फल है। परा–शक्ति के बाद इन्सान ही जगत् का संचालक है।

इस दुर्लभ, अद्वितीय शरीर का निर्माण करने हेतु माँ का दायित्व और भी बढ़ जाता है। अस्तु ! उन सोलह संस्कारो में प्रथम तीन अर्थात् **गर्भाधान, पुंसवन और सीमन्तोन्नयन** तो बालक के गर्भावस्था में रहने पर ही सम्पन्न किये जाते हैं। माँ की सोच, उसके आचरण, खान–पान सबका प्रभाव कोख में पलने वाले बच्चे पर पड़ता है।

फिर होता है जन्म **जातकर्म संस्कार**। यदि शास्त्रोक्त विधि से सभी संस्कार निष्पन्न हों तो बालक पर उसका सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। परन्तु खेद इस बात का है कि संस्कार के मर्म को समझने का प्रयत्न ही नहीं किया जाता। पाँचवाँ संस्कार है **नामकरण**। कितना सुन्दर विधान है इस संस्कार को मनाने का। पिता बालक की नासिका–द्वार से बाहर निकलती हुई वायु (श्वास) का स्पर्श करके पूछता है–

'कोऽसि, कतमोऽसि, कस्यासि, को नामासि'

अर्थात् तुम कौन हो, कहाँ से आए हो, किसके हो और तुम्हारा नाम क्या है? फिर उसे एक विशिष्ट नाम दिया जाता है। शास्त्र कहता है कि नाम सार्थक होना चाहिए। नाम के अनुकूल यदि उसका आचरण भी हो, तो ' सोने पे सुहागा'।

सूची में छटा संस्कार है 'निष्क्रमण' अर्थात् बालक को घर के बाहर जहाँ वायु, स्थान शुद्ध हों, वहाँ भ्रमण कराना, घुमाना। वस्तुतः इससे होता है सूर्य की प्रथम रश्मियों से बालक का स्पर्श। 'अन्नप्राशन' सातवाँ संस्कार है। जो बालक को अन्न पचाने की शक्ति के लिए किया जाता है।

'चूड़ाकर्म' अर्थात् प्रचलित 'मुण्डन' संस्कार तदनन्तर आठवाँ संस्कार है। उत्तरायण काल, शुक्ल पक्ष में जिस दिन आनन्द–मंगल हो, उस दिन प्रायः संस्कार को करने का विधान है। बालक के लिए 'कर्णवेध' संस्कार में कान और नासिका छिदवाने का विधान है जिसे जन्म से तीसरे या पाँचवें वर्ष में सम्पन्न कराया जाता है। 'ओं भद्रं कर्णेभिः श्रृणुयाम देवा' कितना सटीक मंत्र है।

और दसवाँ संस्कार है 'उपनयन' जिसे 'यज्ञोपवीत' संस्कार भी कहा जाता है। वस्तुतः इसके तीन धागे मातृऋण, पितृऋण और आचार्यऋण की स्मृति को सदा बनाए रखते हैं। 'उप' अर्थात् समीप और 'नयन' अर्थात् ज्ञानोपार्जन का श्रीगणेश। ध्यान रहे ज्ञान की कोई सीमा नहीं। 'समावर्त्तन' संस्कार में ब्रह्मचर्यव्रत, साङ्गोपांग वेदविद्या, उत्तम शिक्षा और पदार्थ–विज्ञान को पूर्ण रीति से प्राप्त कर गृहाश्रम को ग्रहण करने के लिए विद्यालय को छोड़ घर की ओर आना होता है।

तेरहवाँ संस्कार है 'विवाह संस्कार'। इसे 'पाणि–ग्रहण' भी कहा जाता है। इस संस्कार का विशेष महत्त्व है क्योंकि 'संस्कारित' सन्तानें यहीं से पैदा होती हैं। ब्राह्मण और संन्यासी इन्हीं गृहस्थों के द्वार पर ही आते हैं 'भिक्षां देहि' इन्हीं के द्वार पर बोला जाता है। वस्तुतः गृहस्थाश्रम वालों का समाज के प्रति विशिष्ट दायित्व बन जाता है। पति–पत्नी का परस्पर समर्पण इस आश्रम को और सुदृढ़ बनाता है। 'Husband' हस्तबन्ध का ही पर्याय है।

फिर बारी आती है 'वानप्रस्थ' संस्कार की। इसे तीसरा आश्रम भी कहा जाता है। ब्रह्मचर्य और गृहस्थ के बाद। विधान यह है कि जब पुत्र का भी पुत्र हो जावे अर्थात् जब गृहस्थी पौत्र वाला बन जाए तो उसे वन की ओर चलने की तैयारी करनी चाहिए। शास्त्र के अनुसारः

ब्रह्मचर्याश्रमं समाप्य गृही भवेद्,
गृही भूत्वा वनी भवेद्,
वनी भूत्वा प्रव्रजेत्।। –शतपथ ब्राह्मण
व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम्।
दक्षिणयाृ श्रद्धामाप्नोति
श्रद्धया सत्यमाप्यते।। (यजुः 19/30)

50 से 75 वर्ष की आयु का काल वानप्रस्थ कहा जाता है। –**'जीवेम् शरदः शतम्'** के अनुसार चार आश्रम–ब्रहचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास–25,25 वर्ष की अवधि के निर्धारित किये गये हैं। जब गृहस्थ वानप्रस्थ होने की इच्छा करे तब अग्नि–होत्र को सामग्री सहित लेकर ग्राम से निकल जङ्गल में जितेन्द्रिय होकर निवास करे–

अग्निहोत्रं समादाय गृह्यं चाग्निपरिच्छदम्।
ग्रामादरण्यं निःसृत्य निवसेन्नियतेन्द्रियः।।
(मनु. अ. 6)

क्या ही अच्छा हो कि परिवार में रहते हुए भी मुखिया वानप्रस्थ का जीवन व्यतीत करे। पन्द्रहवाँ संस्कार है 'संन्यास' (संन्यास आश्रम) जिसमें सन्यासी के महत्त्वपूर्ण कर्त्तव्य की इस प्रकार विवेचना की गई हैः

अग्ने नय सुपथा रायेऽअस्मान्विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नम उक्तिं विधेम।। –यजुः 40/16

हे परमात्मादेव मुझे सुपथ पर ले चलो। मैं बार–बार इसी की याचना करता हूँ।

इन सोलह संस्कारों की संक्षिप्त चर्चा के उपरान्त वानप्रस्थ संस्कार (आश्रम) पर थोड़ा और विचार करने की आवश्यकता है। भारतीय संस्कृति के अनुसार व्यक्ति जब आयु में बड़ा होने लगता है तो उसे प्रौढ़ की संज्ञा दी जाती है। अंग्रजी में इसका पर्याय है (Matured)। सरकार की ओर से आयु की दृष्टि से वरिष्ठ नागरिक (Senior Citizen) को कुछ सुविधाएँ अवश्य दी जाती हैं परन्तु क्या आयु में बड़ा होने से उसमें बड़प्पन (Maturity) आ जाता है। Seniority और Maturity दो अलग–अलग अवस्थाएँ हैं। जो आयु में वरिष्ठ हो उसमें बड़प्पन भी हो यह आवश्यक नहीं और इसी प्रकार बड़प्पन के गुण धारण करने वाला आयु में भी बड़ा हो, यह आवश्यक नहीं। फ़ारसी में एक कहावत हैः

बुजुर्गी ब अकल अस्त, न ब साल।
तवानगी ब उमर अस्त, न ब माल।।

Maturity is the outcome of
intelligence and not years,
Seniority is because of age, not
riches.

बड़प्पन में ही जीवन का सुख और आनन्द है।

प्रौढ़ संस्कार की बात करें तो उस व्यक्ति में Matured person जैसा व्यवहार दिखना चाहिए न कि Seniority का। प्रौढ़ तो मार्ग दर्शक होता है, अपने अनुभवों के आधार पर वह समाज के हितार्थ कुछ कर गुजरने की चाह लिए रहता है। यदि उसे समाज और परिवार का सिरमौर कहा जाए तो अतिशयोक्ति न होगी। 'स्व' का त्याग और 'पर' की ओर बढ़ना ही प्रौढ़ता है। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना को अपनाने से निराशा नहीं होगी।

संस्कृत में एक कहवत है–
न सा सभा यत्र सन्ति न वृद्धाः।
वृद्धाः न ते ये न वदन्ति धर्मम्।।
नासौ धर्मो यत्र न सत्यमस्ति,
न तत् सत्यं यच्छलेनाभ्युपेतम्।।–महाभारत

अस्तु प्रौढ़ व्यक्ति को सत्संग, स्वाध्याय, सेवा, परोपकार, दान आदि से अपने जीवन को सुखी, शान्त और सन्तुलित बनाना चाहिए। इसी से जीवन में समरसता भी आएगी। निराशा दूर होगी और आत्मिक शक्ति बढ़ेगी। प्रौढ़ व्यक्ति का यही कर्त्तव्य पथ है

संसार दुःख दलनेन सुभूषिता ये।
धन्या नरा विहित कर्म परोपकाराः।।

इसलिए आइए। हम (Senior) न बनकर प्रौढ़ (Matured) बनें। नर सेवा हमारी वरिष्ठता को प्रौढ़ता में परिवर्तित कर यह सीख देती है कि सेवा मात्र उपकार नहीं अपितु समाज के प्रति आभार व्यक्त करने का एक माध्यम है।

किसी शायर ने ठीक ही कहा है–

ये शामे जिन्दगी इसे हँस के गुजारिए।
रस्ता है बड़ा कठिन, मगर हिम्मत न हारिए।।

'वरेण्यम्', ए–1055,
सुशान्त लोक–1
गुरुग्राम–122009 (हरियाणा)

पुरोहित की आवश्यकता है

1. किसी भी मान्यता प्राप्त विश्वविद्यालय से शास्त्री/आचार्य पास
2. वैदिक विचार धारा व वैदिक संस्कारों से सुपरिचित
3. सुयोग्य वक्ता होने के साथ–साथ संगीत–भजन/गीत गायन में कुशल एवं हार्मोनियम वादन का ज्ञान।
4. सुविधाओं से युक्त पृथक् आवास की सुविधा
5. वेतन योग्यतानुसार
6. भारत की सुरम्य नगरी चण्डीगढ़ की संभ्रान्त संस्था में सेवा कार्य करने का सुअवसर।
7. शीघ्रातिशीघ्र आवेदन करें। प्रधान/मन्त्री, आर्य समाज, सैक्टर 7बी, चण्डीगढ़ पिन–160019 पर आवेदन करें।

'जीव, ईश्वर तथा महर्षि दयानन्द'

●मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून

संसार में दो प्रकार के पदार्थ हैं, एक चेतन पदार्थ हैं एवं दूसरे जड़ पदार्थ, जो चेतन पदार्थों के गुणों के सर्वथा विपरीत गुण वाले होते हैं। इन चेतन पदार्थों में जीव और ईश्वर दोनों ही चेतन पदार्थ हैं, दोनों का स्वाभाव पवित्र है, दोनों अविनाशी हैं तथा धार्मिकता आदि गुणों से युक्त हैं। इन गुणों की समानता होने पर भी दोनों के गुणों में परस्पर कुछ भेद भी हैं। पहला भेद तो यह है कि सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय करना, सबको नियम में रखना तथा जीवों को पाप-पुण्य के फल देना आदि धर्मयुक्त कर्म परमेश्वर के हैं। जीव के सन्तानोत्पत्ति, उनका पालन-पोषण तथा शिल्प-विद्या आदि अच्छे और बुरे कर्म हैं। दूसरा भेद यह है कि ईश्वर के नित्यज्ञान, आनन्द और अनन्त बल आदि गुण हैं जो सदा व हर क्षण ईश्वर में विद्यमान रहते हैं। ईश्वर से उसके यह गुण पृथक कभी नहीं होते। इसके विपरीत जीव में इच्छा-द्वेष, सुख-दुःख, ज्ञान और प्रयत्न आदि का होना ये गुण हैं। तीसरा अन्तर यह है कि ईश्वर सर्वव्यापक और सर्वज्ञ है जबकि जीवात्मा अल्पज्ञ, एकदेशी, ससीम और अल्पपरिमाणी है। चौथा अन्तर दोनों में यह है कि ईश्वर नित्य शुद्ध, नित्य बुद्ध और नित्य मुक्त स्वभाव वाला है तथा जीव कभी बद्ध होने वाला और कभी मुक्त होने वाला है। पाँचवाँ भेद ईश्वर व जीवन में यह है कि ब्रह्म सर्वव्यापक और सर्वज्ञ होने से कभी भ्रम अथवा अविद्या से ग्रसित नहीं होता जबकि जीव अल्पज्ञ होने से कभी तो विद्या से युक्त होता है और कभी अविद्या से ग्रसित होता है। छठा अन्तर यह भी है कि ईश्वर को जन्म व मृत्यु का दुःख कभी नहीं होता परन्तु जीव को यह दोनों दुःख क्रम से होते रहते हैं तथा जीव इनके द्वारा सताया जाता है।

उपयुर्क्त पंक्तियों में हमने जीव व ईश्वर के स्वरूप व इनके गुणों के भेद को प्रस्तुत किया है। अब ईश्वर का स्वरूप व गुण कैसे हैं, इन्हें किंचित विस्तार से महर्षि दयानन्द की विचारधारा के अनुरूप प्रस्तुत करते हैं। महर्षि दयानन्द के अनुसार ईश्वर सब सत्य विद्या और विद्या से जाने वाले सभी पदार्थों का आदि मूल अथवा Root cause है। वह ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है। सर्वव्यापक और निराकार होने के कारण ईश्वर कभी अवतार नहीं लेता। ईश्वर को अवतार लेने की कोई आवश्यकता भी नहीं है। वह बिना अवतार लिए अपने सभी कार्यों को कर सकता है। जिस प्रकार से ईश्वर दूसरा ईश्वर नहीं बना सकता, स्वयं को मार नहीं सकता उसी प्रकार से ईश्वर अवतार नहीं लेता। ईश्वर का अवतार मानना एक अत्यन्त महत्वपूर्ण विचार व मान्यता है। वेदाध्यन से इसका प्रतिवाद होता है। चेतन पदार्थ होने के कारण ईश्वर में ज्ञान व क्रियायें भी विद्यमान हैं। चार वेद यथा ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद व अथर्ववेद ईश्वर का नित्य व अनादि ज्ञान हैं जिसे वह सृष्टि के आरम्भ में मनुष्यों के जीवन निर्वाहार्थ चार ऋषियों को देता है। ईश्वर का ज्ञान होने के पश्चात सब मनुष्यों का कर्तव्य व धर्म है कि वह वेद को आचार्यों से अवश्य पढ़े व उसके अनुसार आचरण करें। इसी प्रकार से स्वयं वेद पढ़कर व उसे जीवन में धारण कर अन्यों को पढ़ाना व समझाना भी सभी मनुष्यों का धर्म नहीं अपितु परम धर्म है। इस धर्म का सबसे अच्छा पालन विगत 150 वर्षों में महर्षि दयानन्द जी व उनके अनुयायियों ने किया है। वेद में वर्णित ईश्वर के गुणों को जानकर ही ईश्वर उपासना करना सभी मनुष्यों का कर्तव्य भी है। ईश्वर के स्थान पर अन्य किसी भिन्न सत्ता की उपासना करना उचित नहीं है। यह ईश्वर का स्वरूप व उससे सम्बन्धित मुख्य बातें हैं जो सभी मनुष्यों को जानने योग्य हैं। इसी प्रकार से जीव व जीवात्मा अनादि, नित्य, अनुत्पन्न, अविनाशी, एकदेशी, ससीम, चेतन तत्त्व, कर्मानुसार या प्रारब्ध के अनुसार जन्म मरण धर्मा, पुण्य व पापों के अनुसार सुख व दुख भोगने वाला तथा वेदों का ज्ञान प्राप्त करके उसके अनुसार उपासना कर व अन्य कर्मों को करके मुक्ति को प्राप्त होता है। मनुष्य योनी प्राप्त होने पर सभी को पंच महायज्ञ अर्थात ईश्वरोपासना, अग्निहोत्र यज्ञ, माता-पिता की सेवा, अतिथियों की संगति व सेवा तथा पशु-पक्षियों, कीट व पतंगों को उन्हें निर्वाहार्थ अन्न व भोजन प्रदान करना आदि कर्मों को करना आवश्यक है। इस प्रकार से यह ईश्वर व जीवों का स्वरूप व उनमें भेदों को जानना सभी को उचित है।

आइये, जीव व ईश्वर के परस्पर सम्बन्धों पर भी महर्षि दयानन्द के विचारों को जानते हैं। जीव और परमेश्वर का परस्पर व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध है। यहाँ कोई ऐसी शंका करे कि जिस स्थान में एक वस्तु होती है उस स्थान में दूसरी वस्तु नहीं रह सकती। अतःजीव है वहाँ परमेश्वर की सत्ता कैसे हो सकती है? इस शंका का समाधान यह है कि यह नियम समान आकारवाले पदार्थों में घट सकता है असमान आकार वाले पदार्थों में नहीं। जैसे लोहा स्थूल और अग्नि सूक्ष्म होता है इसलिए लोहे में विद्युत् रूपी अग्नि व्यापक और जीव व्याप्य है। व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध की भाँति ईश्वर और जीव का सेव्य-सेवक, आधार-आधेय, स्वामी-भृत्य, राजा-प्रजा और पिता-पुत्र आदि सम्बन्ध भी है।

क्या परमेश्वर तीन कालों यथा भूत, भविष्य और वर्तमान की सभी बातों को जानता है? यदि जानता हो तो ईश्वर जैसा निश्चय करेगा वैसा ही जीव कर्म करेगा। इसलिए जीव स्वतन्त्र नहीं और ईश्वर जीव को दण्ड भी नहीं दे सकता क्योंकि जैसा ईश्वर ने अपने ज्ञान से निश्चित किया, जीव ने वैसा ही कर्म किया। ऐसी शंका ठीक नहीं है। ईश्वर को त्रिकालदर्शी कहना मूर्खता का काम है। भूत, भवियत् जीवों के लिए है, परमेश्वर का ज्ञान तो सदा एकरस एवं अखण्ड रहता है। **हाँ, जीवों के कर्म की अपेक्षा से परमेश्वर में त्रिकालज्ञता है, स्वतः नहीं।** जैसे स्वतन्त्रता से जीव कर्म करता है, वैसे ही सर्वज्ञता से ईश्वर जानता है। जीवों के कर्मों के फल देना ईश्वर के अधिकार में है और वह उनके कर्मानुसार सुख, दुःख फल देता है व जन्म-जन्मान्तरों में उन्हें मनुष्य-पशु-पक्षि योनियों में भेजा करता है।

महर्षि दयानन्द के जीव व ईश्वर विषयक यह विचार वेद, तर्क, युक्ति व सृष्टि क्रम की कसौटी पर पूरी तरह सत्य हैं और सभी मनुष्यों के लिए समान रूप से मानने योग्य हैं। हम आशा करते हैं कि यह विचार सभी मनुष्यों के लिए ग्राह्य व उपयोगी होंगे।

196 चुक्खूवाला-2
देहरादून-248001

गुरुकुल आश्रम का गौरव बढ़ाया

प्रसिद्ध आर्य सन्यासी पूज्य स्वामी धर्मानन्द जी सरस्वती के अनथक परिश्रम एवं तप, त्याग से अब आर्य समाज के गुरुकुलों में गुरुकल आश्रम आमसेना का प्रमुख स्थान है। इस गुरुकुल के छात्रों के सर्वविध विकास के लिए विशेष प्रयत्न किया जाता है। फलस्वरूप यहां के ब्रह्मचारी बौद्धिक एवं शारीरिक विकास में आगे रहते हैं।

ओडिशा के प्रान्तीय कुश्ती दंगल में गुरुकुल के तीन ब्रह्मचारी ब्र. लोकेश्वर आर्य ब्र. हृषिकेश आर्य ने 65 किलो वजन में क्रमशः प्रथम एवं द्वितीय स्थान प्राप्त किया ब्र. बलदेव आर्य ने 95 किलो वजन में तृतीय स्थान प्राप्त किया।

इसी प्रकार भारत सरकार के शिक्षा मन्त्रालय के राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान की ओर से ओडिशा प्रान्तीय शास्त्र प्रतियोगिता पुरी में आयोजित प्रतियोगिता में महाभाष्य में ब्र. स्वराज आर्य, धातुरूप में ब्र. मित्रभानु आर्य, अष्टाध्यायी कण्ठस्थीकरण में ब्र. रुपेश आर्य ने प्रथम स्थान प्राप्त किया।

इस प्रकार इस शास्त्र प्रतियोगिता में गुरुकुल के होनहार तीनों ब्रह्मचारियों ने प्रथम स्थान प्राप्त करके गुरुकुल का गौरव बढ़ाया है।

आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री ने मॉरीशस के राष्ट्रपति से महिला सशक्तिकरण की वकालत की

वैदिक विद्वान आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री जी ने मारीशस के राष्ट्रपति से भेंट के दौरान उन्हें अपना साहित्य भेंट करते हुए महर्षि दयानन्द की उस सद्द इच्छा की चर्चा की जिसके अनुसार उन्होंने महिलाओं को समान अधिकार, शिक्षा और ज्ञान देने पर बल दिया था। राष्ट्रपति भवन में महामहिम अमीना गरीब फकीम से शिष्टाचार भेंट के दौरान अध्यात्म पथ के संपादक आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री ने राष्ट्रपति महोदया की आयुर्वेद पर किये गये उल्लेखनीय कार्यो की भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए उनके और मॉरीशस वासियों के सुखद जीवन की कामना की।

ज्ञात हो राष्ट्रपति महोदया सुयोग्य लेखिका एवं अत्यन्त मृदुभाषी एवं विनम्र है। उन्होंने आचार्य चन्द्रशेखर शास्त्री को लेखक होने के नाते अपना स्वाभाविक सहयोगी बताया और उन्हें मॉरीशस भारतमैत्री को और सुदृढ़ करने की शुभकामना दी।

इस अवसर पर आर्यसभा मॉरीशस के महामन्त्री श्री हरिदेव रामधनी, वरिष्ठ उपप्रधान श्री बालचन्द तानाकूर, वेदप्रचार समिति के महामन्त्री पं. श्याम दायबू आदि गणमान्य महानुभाव उपस्थित थे।

पत्र/कविता

यही यही बस राह यही है

सं पूषन विदुषा नय यो अज्जसानुशासित।
य एवेदमिति ब्रवत्।। ऋ 06.54.1

नहीं नहीं है अन्य नहीं है।
यही यही बस राह यही है।।

परमेश पिता पूषन प्यारे।
उद्धारक हैं आप हमारे।
प्रभु देव हमें ले चलो वहाँ,
सरल विप्र हों जहाँ सुखारे।
जिसने निज अनुभूति कही है।
यही यही बस राह यही है।।1।।

जीवन में आश्वासन आये।
प्रीति रीति अनुशासन आये।
जग और जगत्पति दोनों से,
सहज सुलभ सहवासन आये।
यही यही बस राह यही है।।2।।

मन में नहीं अनिश्चय होवे।
और न किंचित् संशय होवे।
सुगम सहज वे पन्थ दिखायें,
जीवन जिससे निर्भय होवे।
मधुर मुखर मन मञ्जु नहीं है।
यही यही बस राह यही है।।3।।

देव नारायण भारद्वाज
देवातिथि अलीगढ़,

युक्ति और प्रमाणों से नई पीढ़ी को समझाना होगा

आज की परिस्थिति में देश में यदि कोई आशा की किरण दिखाई देती है तो वह आर्य समाज है। आर्य समाज एक आशावादी संगठन है, यह कभी निराश नहीं हुआ। देश की गुलामी के दिनों में आर्यसमाज का आविर्भाव हुआ। थोड़े से समय में ही यह विश्व भर में विख्यात हो गया। अमेरिका के एक विद्वान ने महर्षि दयानन्द के ही समय में इस समाज के बारे में लिखा था कि मुझे आर्य समाज के रूप में एक आग दिखाई देती है जो देश के सभी अन्धविश्वास, अज्ञान व कुरीतियों को दूर कर रही है। उन्होंने कहा कि आर्य समाज की आग इसकी विचार धारा की आग है। इस आग में आर्य समाज के नेताओं का बलिदान व देश की धार्मिक व सामाजिक उन्नति के लिए इनका समर्पण भी है। पूरी दुनिया में केवल एक ही संस्था है जो यह घोषणा करती है कि संसार का उपकार करना आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक एवं सामाजिक उन्नति करना। 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के विचार को केन्द्र में रखकर महर्षि दयानन्द ने आर्यसमाज की स्थापना की थी। आर्यसमाज मानव मात्र के उपकार व कल्याण की बातें सोचता है। नई पीढ़ी को संस्कारित करना आज की मुख्य आवश्यकता है। ईश्वर को क्यों मानें, वेद ईश्वरीय ज्ञान है, यज्ञ क्यों करें आदि, इन विषयों को युक्ति व प्रमाणों से नई पीढ़ी को समझाना होगा। यदि हम विफल रहे तो आने वाला समय बहुत खतरनाक होगा। हमारी भावी पीढ़ी आज के बच्चे हैं। यह विभिन्न क्षेत्रों में जायेंगे जिसका प्रभाव देश व समाज पर पडेगा जो इनके धर्म व संस्कृति से अनभिज्ञ होने के कारण अच्छा नहीं होगा।

मनमोहन कुमार
देहरादून

****

माता पिता आचार्य का परमधर्म है कि वे सन्तानों के चरित्र की रक्षा करें

विवाह से पूर्व तक युवा सबको बहन व युवतियां सब को भाई कह पुकारें व देखें। युवाओं के चरित्र रक्षा का सरलतम उपाय है कि "युवक व पुरुष" युवतियों के प्रति शुद्ध भाव रखने हेतु सदा अपने साथ अपनी माता का युवा–अवस्था का पूर्ण श्रृंगार का चित्र पर्स एवं शयन कक्ष (बैडरूम) में रख देखा करें व विचार करें कि अन्य युवतियों का शरीर बाहर–बीतर से मेरी मां जैसा ही है।

"युवतियां व महिलाएं" अपने पिता का पूर्ण युवा अवस्था का चित्र अपने पर्स व शयन कक्ष मे रखें एवं विचारा करें कि मेरे पिता सा शरीर और युवाओं का भी है।

विवाह से पूर्व ब्रह्मचर्य संयम पालन करने से सुन्दर सन्तान, गृहस्थ का पूर्ण सुख व ओमानन्द मिलता है।

आचार्य आर्य नरेश
उद्गीय स्थली (हिमाचल प्रदेश)

****

सहिष्णुता बनाम असहिष्णुता

गाँव में दर्जी की दुकान में पिता के साथ उसका बेटा भी कपड़े सिलता था।

एक दिवस बेटे ने पापा से पूछा कि आप कपड़े को काटने के बाद कैन्ची को पैरों के पास रखते है जबकि कपड़े सीने के बाद सुई को टोपी मे लगा देते हैं, ऐसा क्यो?

दर्जी ने बेटे के समझदारी भरे प्रश्न को गहराई से समझा और बोला कि बेटा, कैची हमेशा काटने का नाम करती है जबकि सुई जोड़ने का काम काती है। जिसका जैसा काम वैसे ही उसके साथ व्यवहार।

कथा मर्म समाज को जोड़ने काम सहिष्णुता ही करती है जबकि असहिष्णु हमेशा समाज को काटने का काम करते हैं।

सहिष्णु को इसीलिए समाज सम्मान देता है जबकि असहिष्णु को समाज में निकृष्ट माना जाता है।

कृष्णा मोहन गोयल
113 बाजार कोट–अमरोहा

****

धर्म अनेक, पूर्वज एक

इण्डोनेशिया के राष्ट्रपति सुकर्णो ने नेहरु जी को राष्ट्रीय अतिथि के रूप में आमंत्रित किया था नेहरु जी के सम्मान में सुकर्णो ने एक सांस्कृतिक कार्यक्रम रखा। इस कार्यक्रम रामलीला का बड़ा प्रभावशाली मंचन हुआ था। श्री नेहरु जी बड़ी प्रसन्नता से डा. सुकर्णो से पूछा "राष्ट्रपति जी इण्डोनेशिया तो एक इस्लामिक राष्ट्र है, किन्तु आपने रामलीला का मंचन कैसे कराया, यह तो हिन्दुओं का इतिहास है।" राष्ट्रपति सुकर्णो ने नेहरु जी को उत्तर दिया – 'प्रधानमंत्री जी हमारे बुजर्गों ने न जाने किन परिस्थितियों में किन विपदाओं में कैसे मजहब बदल लिया किन्तु हमने अपने पूर्वज और अपना इतिहास नही बदला हैं, हमें इस से लगाव है हम इसे प्यार करते हैं। रामायण का हमारे देश में बहुत बड़ा सम्मान है। सभी अल्पसंख्यकों को डा. सुकर्णो की यह बात विचारने योग्य है। इसी प्रकार एक बार सीमान्त प्रदेश के सीमान्त गांधी के छोटे भाई बादशाह खान का अभिनन्दन हुआ था। अपने अभिनन्दन के उत्तर में उन्होंने कहा था – "आप मुझे विदेशी क्यूँ मान रहे हैं? मैं तो आपके आचार्य पाणिनि के राजस्थान 'शालातूर' के पास का हूँ। मैं तो अपने को प्रथम आर्य मानता हूँ फिर पठान हूँ, फिर मुसलमान हूँ। यह वास्तविक सच्चाई है कि मजहब तो विचारों के कारण, लोभ, लालच के कारण, भय के कारण, छल प्रपञ्च किसी भी कारण से बदल जाता है। किन्तु भूगोल, इतिहास और राष्ट्रीय उपलब्धियां नही बदलतीं। रूस के कम्युनिष्ट टालस्टाय का सम्मान करते हैं, चीन के कम्युनिस्ट कन्फ्यूसियस का सम्मान करते है तो व्यास, बाल्मीकि, कालिदास आदि भारतवासियों के लिए भी सम्मान और आत्मीयता के पात्र है चाहे सम्प्रदाय या मजहब कोई भी हो हमारे देश के भी सभी अल्पसंख्यक अरब या जैरूसलम से नही आये हैं। एकाध प्रतिशत को छोड़कर सभी भारत की संतान है और यहां शत–प्रतिशत ही सबका इतिहास है।

मोहन लाल मगो
पी. –65, पाण्डव नगर
दिल्ली –110091

****

विद्यार्थी राजनीति से दूर रहें

● डा. अशोक आर्य

हम वेद के आधार पर आज की शिक्षा की समस्याओं के समाधान सोच रहे हैं। ऋग्वेद 7.33.19 मन्त्र के आधार पर हमने देखा कि आज की शिक्षा की सबसे बड़ी समस्या नारी के अर्धनग्न पहरावा तथा वर्त्तमान चल चित्र दूरदर्शन में भी अर्धनग्न चित्रण, गंदे गीत और नगरों के विभिन्न तथा सार्वदेशिक स्थानों पर अर्धनग्न चित्रों का प्रदर्शन आज के विद्यार्थी के अनुशासन में बाधक है। इस प्रसंग को आगे बढ़ाते हुए हम अब यह चर्चा करते हैं कि वर्तमान राजनीति भी विधार्थी के अनुशासन हीनता का एक अन्य कारण है। आओ इस पर विचार करें।

आज राजनैतिक दल अपनी रोटियाँ सेंकने के लिए कसी भी प्रकार की गन्दगी समाज में फैलाने से कहीं व कभी पीछे नहीं देखते। इन का उद्देश्य साम, दाम दंड, भेद से गद्दी प्राप्त करना होता है। इस बात की इन को चिन्ता ही नहीं होती कि उनके इस गंदे कार्य से किसी को आर्थिक हानि होती है या किसी को उन के गंदे आचरण से शारीरिक हानि होती है। उन्हें इस बात की भी चिंता नहीं होती कि उनके इस आचरण के कारण किसी की जान भी जा सकती है। जब इस प्रकार की चिंता उन्हें नहीं है तो फिर विद्यार्थी का जीवन नष्ट होगा, उसका आचरण बिगड़ेगा, देश की भावी पीढ़ी का जीवन इस कार्य से नष्ट होगा, देश बहुत पीछे चला जावेगा, इस बात की चिंता वे कहाँ करते हैं।

आज के राजनेता अपने दल के हित में विद्यार्थियों का प्रयोग करने लगे हैं। उन्हें इस बात की चिंता नहीं है कि उनके इस प्रयोग से देश का कितना नाश होने वाला है। हो यह रहा है कि राजनेता अपने दल के हित में तथा विरोधियों के अहित में, विशेष रूप से विरोधी दल सत्ता वाले दल के विरोध में अनेक प्रकार से विद्यार्थियों को भटकाने लगे हैं। अपने हित साधन के लिए वे विद्यार्थियों को यहाँ तक भटका देते हैं कि विद्यार्थी अनेक बार सरकार तथा सरकारी अधिकारियों के विरोध में नारेबाजी करते हुए सड़को पर उतर आते हैं, यदि इससे भी इन नेताओं का उल्लू सीधा नहीं होता तो यह सरकार के विरोध में इन विद्यार्थियों का प्रयोग करते हुए इन से हड़ताल करवा देते हैं। विद्यार्थियों के इन सब कार्यों से उनकी पढ़ाई में बाधा आती है। राज नेताओं के इस प्रयोग से विद्यार्थी अनुशासन हीन हो जाता है। इतना ही नहीं वह उद्दंड भी हो जाता है तथा अनेक प्रकार की झाड़ फूँक करके वह देश की संपत्ति को हानि भी पहुंचाता है।

इस सब के लिए ये राजनेता इन विद्यार्थियों को अनेक प्रकार के बहाने भी सुझाते हैं, जिन के नाम पर वे उनके लिए यह सब संघर्ष करते हैं। विद्यार्थी से कहलवाया जाता है कि वह यह जो कुछ भी कर रहे होते हैं . यह सब वह अपनी स्वाधीनता के लिए कर रहे हैं। उससे यह भी कहलवाया जाता है कि यह सब आत्म–सम्मान के लिए कर रहे हैं। जब तक उनके कार्यों में हस्तक्षेप बंद नहीं होगा, जब तक उनके आत्मासम्मान की रक्षा नहीं होगी, वह संघर्ष कराते ही रहेंगे।

यह दल अपने हित साधन के लिए अपने दल पर आधारित विद्यार्थी संगठन भी बना लेते हैं और यह संगठन जिस दल से संबंधित होता है उस राजनैतिक दल के हित में कार्य करते हुए सरकार का तथा उसकी सब नीतियों का विरोध करने लगता है। अपने दल से सम्बंधित राजनेताओं के उकसावे में आ कर यह विद्यार्थी संगठन अनेक प्रकार के विरोध प्रदर्शन करते हैं, शिक्षण संस्थाओं में हड़तालें करते हैं। ये विद्यार्थी अपनी मांगो के समर्थन में बहुत ही बेहुदे ढंग के इश्तिहार सार्वजनिक स्थानों पर लगाते हैं। ये इश्तिहार बहुत ही अपमान जनक होते हैं। गंदे–गंदे नारे लगाते हुए प्रदर्शन किये जाते हैं। सार्वजनिक सभाओं में गन्दी भाषा का प्रयोग करते हुए भाषण होते हैं तथा सरकार पक्ष को अनेक प्रकार की धमकियां देते हुए भी गन्दी से गन्दी भाषा का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार सब तरह से अपनी माँगों के लिए दबाव बनाया जाता है। यह सर्वथा निंदनीय है। विद्यार्थी को तो राजनीति से सदा दूर रहना चाहिए और कभी भी राजनेताओं के चंगुल में न फंसना चाहिए। इस में ही उनका भला है।

एक परिवार में भी कई बार एक विचार नहीं बन पाता तथा अपनी बात मनवाने के इए परिवार के सदस्योंको भी अनेक बार संघर्ष करना पड़ता है। साधारणतया किसी अबला को कोई समस्या या कष्ट होता है तो अह इस अपने माता पिता के सामने रखता है। वह अपने माता पिता से प्रार्थना करता है कि उसके कष्टों को दूर करने का उपाय किया जावे, उसे जो शंका है, उसका समाधान किया जावे, जिस वस्तु कि उसे आवश्यकता है, उस वस्तु की उसे पूर्ति की जावे। ठीक यह अवस्था ही हमारी शिक्षण संस्थाओं में भी होनी चाहिए। वह अपनी प्रत्येक आवश्यकता तथा प्रत्येक समस्या को अपने अध्यापकों के सम्मुख रखे यदि आवश्यक हो तो मुख्याध्यापक के समक्ष भी रखे और इस के समाधान के लिए उसे प्राथना करे। इससे भी अधिक आवश्यक हो तो इसका समाधान उच्च अधिकारियों से भी लेने का प्रयास करे। इससे अनुशासन बनाए रखते हुए उसकी समस्या का समाधान सरलता से निकल आवेगा जबकि राजनेता समाधान नहीं केवल अपने दल का हित चाहते हैं।

विद्यार्थी राजनेताओं के चंगुल में कभी न फंसें किन्तु देश की प्रचलित राजनीति को वह महीनता से समझने का प्रयास करे। विद्यार्थी का यह सर्वोत्तम कर्तव्य है कि वह देश की राजनैतिक स्थिति को समझे, उस पर मनन, चिंतन करे। उस में क्या अच्छा अथवा क्या बुरा है, इसे भली प्रकार से समझे, जाने । यह सब जानने के लिए भी वह किसी भी राजनैतिक दल में किसी प्रकार का क्रियात्मक भाग न ले तथा न ही राजनेताओं के हाथ का खिलौना ही बने। यदि वह इस प्रकार का कुछ भी करता है तो वह अपनी शिक्षा को नष्ट करने का, उसे बाधित करने का स्वयं नहीं होती अन्य भी अनेक अनिष्टकारी परिणाम निकलते हैं, जिनसे समग्र सगाज की हानि होती है। इन सब से बचने के लिए विद्यार्थी को राजनीति से दूर रहना चाहिए और राजनेताओं की धूर्त प्रेरणाओं से सदा बचना चाहिए।

104 शिप्रा अपार्टमेन्ट कौशाम्बी
201010–गाजियाबाद

डॉ.चन्द्रशेखर लोखंडे "समाजरत्न" पुरस्कार से सम्मानित

लातूर (महाराष्ट्र) साहित्य एवं सामाजिक क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किये जाने के उपलक्ष्य में प्रा. डॉ. चन्द्रशेखर लोखंडे जी को महाराष्ट्र के पूर्व मुख्यमंत्री स्व. विलासराव देशमुख की स्मृतिमें पुरस्कार युवा कार्यकर्ता अभिजित देशमुख के हाथों प्रदान किया गया। यह पुरस्कार उनकी कर्मस्थली लातूर के पाखरसांगवी क्षेत्र के रविन्द्रनाथ टैगोर विद्यालय में जनगण परिषद् द्वारा आयोजित समारोह में दिया गया।

मुख्य अतिथि श्री अभिजीत देशमुखने कहा कि "डॉ. चन्द्रशेखर लोखडे जीने अपने गुरूकुलीय ज्ञान का सदुपयोग करते हुए सम्पूर्ण समाज को प्रबाधित करने का अपने जीवन में प्रयास किया है । उन्होंने हिन्दी और मराठी भाषा में राष्ट्र, धर्म यह साहित्य सेवा का अहर्निश कार्य किया है, एक योग्य साहित्यकार को स्व. विलासराव देशमुखजी की स्मृति में पुरस्कार मेरे हाथों से दिया जा रहा है इससे मै स्वयं को गौरवान्वित महसूस कर रहा हूँ।

डॉ. लोखंडे जीने सत्कार का प्रत्युत्तर देते हुए कहा कि इस "समाजरत्न" पुरस्कार से मुझे और अधिक सामाजिक एवं साहित्यिक सेवा करने की प्रेरणा मिलेगी।

डी.ए.वी. काशीपुर में मनाया गया लाला लाजपतराय बलिदान दिवस

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल काशीपुर में लाला लाजपतराय बलिदान दिवस पर छात्रों द्वारा स्वतंत्रता सेनानियों पर आधारित एक नाटक प्रस्तुत किया गया जिसका मुख्य विषय पंजाब केसरी लाला लाजपतराय द्वारा साइमन कमीशन का विरोध प्रस्तुत करना था।

नाटक के माध्यम से छात्रों ने अंग्रेजों द्वारा भारतीयों पर जबरन थोपे जा रहे कानून एवं भारतीयों द्वारा किये गये विरोध प्रदर्शन का सुन्दर प्रस्तुतीकरण किया गया।

दर्शकों द्वारा नाटक की सराहना की गई। प्रधानाचार्य श्री एस.के.श्रीवास्त ने इस ऐतिहासिक नाटक की प्रशंसा करते हुए कहा कि लाला लाजपतराय न केवल एक महान स्वतंत्रता संग्राम सेनानी थे अपितु प्रख्यात आर्य समाजी एवं कर्मठ कार्यकर्ता थे। इनको पंजाब केसरी के नाम से भी जाना जाता है। उन्होंने

कहा कि हमें लाला जी के जीवन से साहस, कर्तव्यपरायणता एवं देश भक्ति की प्रेरणा मिलती हैं। हम सभी को लाला जी के आदर्शों पर चलना चाहिए।

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11 \6066\2015-17
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103 \2015-17
Posted at N.D.P.S.O. ON 09-10 \12 \2015
रजिस्ट्रेशन नं. आर० एन० आई० 39 \57

डी.ए.वी. ठाणे में पहुँचे दादा-दादी नाना-नानी

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, ठाणे में ''ग्रैण्डपेरेण्ट्स डे'' पूरे हर्षोल्लास के साथ मनाया गया। नर्सरी, ज्युनिअर के. जी. छात्र, तथा सिनिअर के. जी. के छात्रों के ग्रैण्डपेरेण्ट्स इस अवसर पर विशेष रूप से मौजूद रहे।

इस अवसर पर आरम्भ में श्रीमति सिम्मी जुनेजा, प्रधानाचार्या डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, ठाणे द्वारा दीप प्रज्ज्वलन किया गया। गायत्री मन्त्र एवं भजन के द्वारा प्रार्थना की गई। इसके बाद विद्यालय के अध्यापक, छात्र एवं सभी छात्रों के ग्रैंडपैरेन्ट्स सभी ने मिलकर पूरे भक्तिभाव से यज्ञ हवन किया। यज्ञ हवन केअन्त में यज्ञप्रार्थना एवं भजन भी सभी ने मिलकर गाये। ग्रैंडपैरेन्ट्स ने उत्साह के साथ अपने विचारों को प्रस्तुत किया। कुछ अतिथियों ने भजन गाये तो कुछ ने कहानियाँ प्रस्तुत कीं। इस 'ग्रैण्डपेरेण्ट्स डे' को इस प्रकार से आयोजित करने केलिए सभी ग्रैण्डपेरेण्ट्स नें विद्यालय की सराहना की तथा भविष्य में भी ऐसी ही गतिविधियाँ करने के लिए विद्यालय को शुभकामनायें प्रदान कीं। शान्तिपाठ एवं जयघोष के साथ कार्यक्रम की समाप्ति हुई।

सैक्टर 6 पंचकूला में छात्रों ने पर्यावरण स्वच्छ करने का संकल्प लिया

हंसराज पब्लिक स्कूल, सैक्टर-6, पंचकूला में छात्रों के द्वारा पर्यावरण संतुलन बनाए रखने का संकल्प लिया गया। दीवाली के अवसर पर छात्रों ने एक रैली निकाली जिसके द्वारा प्रदूषण कम करने का संदेश दिया गया। छात्रों ने पर्यावरण के प्रति जागरूकता लाने के लिए एक नुक्कड़ नाटक भी किया। पूरा दिन इसी संदर्भ में कई गतिविधियाँ करवाई गईं। छात्रों तथा अध्यापकों ने स्वामी आर्यवेश (प्रधान सार्वदेशिक आर्य सभा) जी के मार्गदर्शन में 101 कुंडीय हवन किया। इस अवसर पर स्वामी जी ने कहा, ''हमें अपनों से बड़ों का सम्मान करना चाहिए तथा जंकफूड आदि का पूर्ण रूप से निषेध करना चाहिए।

विद्यालय के नर्सरी विंग के छात्रों ने रामायण के विभिन्न पात्रों का रूप धारण कर अपनी कला का प्रदर्शन किया तथा छठी से दसवीं कक्षाओं के छात्रों ने सुंदर रंगोलियाँ तथा दीए बनाए तथा स्कूल को सुसज्जित किया। प्रधानाचार्य श्रीमती

जया भारद्वाज जी ने बताया कि आधुनिक समय की देन बढ़ते हुए प्रदूषण को दूर करने तथा पीढ़ीयों को जागृत करने के लिए हवन करना हमारे विद्यालय के कार्यक्रम का अभिन्न अंग है।

कादियां में ऋषि निर्वाण उत्सव मनाया गया

डी.ए.वी. सीनियर सैकेंडरी स्कूल कादियां में ऋषि निर्वाण उत्सव बड़ी श्रद्धा से मनाया गया। इस अवसर पर स्कूल के प्रिंसिपल श्री अंग्रेज सिंह बोपाराए श्री सतीश कुमार, श्री मंगा राम, श्री विजय कुमार, श्री अनिल कुमार विद्यमान थे। श्री रविन्द्र कुमार ने बच्चों को इस त्योहार का महत्व बताते हुए कहा कि आज हम पुराने इतिहास और सभ्यता को भूलते चले जा रहे हैं। इस प्रकार के सुअवसर मनाने से समाज में नवचेतना का संचार होता है और बच्चों को नई दिशा मिलती हैं। बच्चों ने दीवाली मनाने का कारण बताते हुए कविताएं और भाषण प्रस्तुत किये। कई बच्चों ने स्वामी दयानन्द जी की अनमोल शिक्षाओं का उल्लेख किया। स्कूल के प्रिंसिपल श्री अंग्रेज सिंह बोपाराये ने अपने उद्‌बोधन में ऋषि दयानन्द के उपकार, भगवान श्री राम का आदर्श जीवन और ग्लालियर के किले से रिहा हुए श्री हरगोबिन्द जी की बहादुरी और साहस पर प्रकाश डाला। उन्होंने ने बच्चों के कार्यक्रम की भरपूर श्लाघा की और महानुभावों द्वारा दर्शाये मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित किया।

डी.ए.वी. जीन्द, ने मिठाईयाँ बाँटकर मनाया दीपावली का पर्व

डी.ए.वी. शताब्दी पब्लिक स्कूल जींद में दीपावली का त्योहार आर्य समाज डी.ए.वी. शाखा जीन्द के तत्वावधान में सम्पन्न किया गया। विद्यालय के प्रधानाचार्य हरेशपाल पांचाल ने बच्चों के माध्यम से अभिभावकों से निवेदन किया था कि आतिशबाजी पर किए जाने वाले खर्च को बचाकर किसी गरीब के घर मिठाई पहुँचाएं ताकि कोई असमर्थ भी त्योहार के अवसर पर अपना मुँह मीठा करने से वंचित न रह जाए। बच्चों और उनके अभिभावकों ने इस कड़ी में

अपने आप को जोड़ते हुए मिठाई एकत्रित की। जिसमें अभिभावकों ने बच्चों को गरीबों के लिए देकर उनके अन्दर सहयोग की भावना का विकास किया।

एकत्रित मिठाई को शहर के गरीब व्यक्तियों, बच्चों; महिलाओं एवम् असमर्थ लोगों तक पहुचाने का काम विद्यालय की आर्य समाज, एन.सी. सी.,एन.एस.एस., स्काऊट एण्ड गाईड एवम् विद्यालय के बच्चों द्वारा किया गया।

त्योहारों के अवसर पर की जाने वाली अतिशबाजी के प्रचलन की समस्या पर प्रार्थना सभा में विद्यार्थियों को सम्बोधित करते हुए प्राचार्य पांचाल ने कहा कि आज व्यक्ति अपने स्वास्थ्य को लेकर बहुत ज्यादा जागरूक है उसके बावजूद भी त्योहारों के अवसर पर जमकर आतिशबाजी की जाती है। इस आतिशबाजी से किसी भी प्राणी का भला नहीं होता केवल क्षणिक मनोरंजन के लिए हम वायु में जहर घोल रहें हैं।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.**, डब्ल्यू-30, ओखला, फेस-II, नई दिल्ली-110020 (दूरभाष : 26388830-32) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.-9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**